राजमल पवैया रचित कुछ पुस्तकें

1. चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान
2. तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्र विधान
3. सम्मेद शिखर विधान
4. इन्द्रध्वज मंडल विधानं
5. शान्ति विधान
6. विद्यमान बीस तीर्थंकर विधान
7. चौसठ ऋद्धि विधान
8. पंचकल्याणक विधान
9. नदीश्वर विधान
10. जिनगुण सपति विधान
11. तीर्थंकर महिमा विधान
12. याग मंडल विधान
13. पच परमेष्ठी विधान
14. पंच कल्याण विधान
15, कर्म दहन विधान
16. जिनसहस्रनाम विधान
17. कल्पद्रुम विधान
18. गणधर वलय ऋषिमंडल विधान
19. जैन पूजांजलि
20. तीर्थ क्षेत्र पूजाजलि
21. श्रुत स्कंध विधान
22. पूजन किरण
23. पूजंन पुष्प
24. पूजन दीपिका
25. पूजन ज्योति
26. मंगल पुष्प प्रथम, द्वितीय
27. मंगल पुष्प द्वितीय
28. मंगल पुष्प तृतीय
29. समकित तरंग
30. अपूर्व अवसर
31. द्वादश भावना
32. आदिनाथ भरत बाहुबलि पूजन
33. आदिनाथ शांतिनाथ महावीर
34. शाति कुन्थु अरनाथ
35. शांति पार्श्व महावीर
36. नेमि पार्श्वनाथ महावीर
37. गोम्मटेश्वर बाहुबलि
38. भगवान महावीर
39. जैन धर्म सर्व धर्म
40. वीरों का धर्म
41. जन मगल कलश
42. जीवन दान
43. सिद्धचक्र वदना
44. तीनलोक तीर्थ यात्रा गीत
45. भक्तामर पद्यानुवाद
46. चतुर्विंशति स्तोत्र
47. जिनेन्द्र चालीसा संग्रह
48. चतुर्दश भक्ति
49. जिन सहस्रनाम हिन्दी
50. जिन वंदना
51. मुनि वन्दना
52. आत्म वन्दना
53. समय
54. अनुभव
55. परमब्रह्म
56. सैंतालीस शक्ति विधान आदि

57. [illegible]
58 - [illegible]
59 - [illegible]
60 - [illegible]
61 - [illegible]
62 - [illegible]

ग्रंथमाला के ध्रुवकोष में सहायता राशि प्रदानकर्ताओं की सधन्यवाद सूची

११,000/-	श्री दि. जैन मुमुक्षु मंडल, भोपाल से प्राप्त सहायता।
१०,000/-	श्री दि. जैन मुमुक्षु मंडल, झवेरी बाजार, बंबई।
५,000/-	श्री पूज्य कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट, देवलाली से प्राप्त।
२५00/-	स्व. बालचन्दजी, अशोकनगर द्वारा चौधरी फूलचन्दजी।
११00/-	श्री सुखवती बाई धर्मपत्नी बाबूलालजी जैन ठेकेदार, भोपाल
११00/-	श्रीमती बसन्ती देवी धर्मपत्नी स्व. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, भिण्ड
११00/-	कु लिटिल सुपुत्री पूर्णिमा धर्मपत्नी शैलेन्द्र कुमार जैन, भिण्ड
११00/-	श्रीमती सुहागबाई धर्मपत्नी बदामीलाल जैन, भोपाल
११00/-	श्री मोहनलाल जैन म. प्र. ट्रांसपोर्ट, भोपाल
११00/-	श्री हुकुमचन्द सुमतप्रकाश जैन, भोपाल
११00/-	श्रीमती सुशील शास्त्री धर्मपत्नी श्री के. शास्त्री, नई दिल्ली
११00/-	सौ. सुशीला देवी धर्मपत्नी ताराचन्द जैन इटावा
११00/-	श्री जैन युवा फेडरेशन मुरार से प्राप्त सम्मान राशि
११00/-	सौ. शशिप्रभा धर्मपत्नी महेशचन्द जैन, फिरोजाबाद
११00/-	सौ प्यारीबाई धर्मपत्नी बाबूलाल जी विनोद भोपाल
११00/-	स्व परमेश्वरी देवी धर्मपत्नी सत्यप्रकाशजी गुप्ता
११00/-	सौ. स्नेहलता धर्मपत्नी चन्द्रप्रकाश सोनी, इन्दौर
११00/-	सौ. रानी देवी धर्मपत्नी सुरेशचन्द पाड्या, इन्दौर
११00/-	श्री दि. जैन महिला मण्डल, भोपाल से प्राप्त सम्मान राशि
१000/-	देवलाली कवि सम्मेलन से प्राप्त सम्मान राशि
१000/-	सौ. निर्मला धर्मपत्नी भरत पवैया, भोपाल
१000/-	श्री भरत पवैया, भोपाल
१000/-	श्री उपेन्द्रकुमार नगेन्द्र पवैया, भोपाल
१000/-	चौधरी फूलचन्दजी, बम्बई
१000/-	श्री कुन्दकुन्द कहान स्मृति सभागृह, आगरा
१000/-	श्री उम्मेदमल कमलकुमारजी बडजात्या, बम्बई
१000/-	श्री हुकुमचन्दजी सुमेरचन्दजी, अशोकनगर
१000/-	सौ. राजबाई धर्मपत्नी राजमल जी लीडर, भोपाल
१000/-	सौ. सुधा धर्मपत्नी महेन्द्रकुमार, भोपाल
१000/-	सौ. मधु धर्मपत्नी जितेन्द्र कुमारजी सराफ, भोपाल
१000/-	सौ. कमला देवी धर्मपत्नी खेमचन्द जैन सराफ, भिण्ड
१000/-	सौ. मधु धर्मपत्नी डॉ. सत्यप्रकाश जैन, नई दिल्ली
५00/-	श्री हिम्मतभाई मेहता, भावनगर
५00/-	श्री दि. जैन मुमुक्षु मण्डल, नवरंगपुरा, अहमदाबाद.

समर्पण

पूज्य गुरुदेव

श्री कानजी स्वामी



जिनका सान्निध्य पाकर मैं धन्य हुआ।
जिनकी कृपा से मैं यह विधान लिखने में समर्थ हुआ
उनकी पवित्र स्मृति में सादर समर्पित

राजमल पवैया

ॐ

त्रयोदशम पुष्प

सैंतालीस शक्ति विधान

रचयिता

राजमल पवैया

❋

संपादक

डॉ. देवेन्द्र कुमार जी शास्त्री, नीमच

❋

प्राक्कथन

प्रतिष्ठाचार्य पं. नाथूलालजी शास्त्री, इन्दौर

❋

संकलन

उमेशचन्द्र जैन, बदामीलाल जैन

❋

प्रकाशक

भरतकुमार पवैया, एम.काम., एल.एल.बी.

तारादेवी पवैया ग्रन्थ माला

44, इब्राहिमपुरा, भोपाल

दि. जैन मुमुक्षु मंडल, भोपाल

~~मुद्रक—एम. के. ऑफसेट, [illegible] 121 [illegible]पुर-भोपाल~~

प्रथम संस्करण-५१०० न्यौछावर-६ रुपये

दो शब्द

श्री राजमल पवैया रचित अत्यंत महिमामय अध्यात्म रस से ओतप्रोत सैतालीस शक्ति विधान आप के कर कमलो मे प्रस्तुत करते हुए अपार हर्ष हो रहा है। सुप्रसिद्ध इन्द्र ध्वज विधान के बाद पवैया जी की यह सफल सशक्त रचना है। इस विधान का महत्व श्री प्रतिष्ठाचार्य पं. नाथूलालजी शास्त्री इन्दौर ने अपने प्राक्कथन में और डॉ. देवेन्द्र कुमार जी शास्त्री नीमच ने अपने संपादकीय में किया है, जो पठनीय है। यद्यपि पवैया जी की अनेक रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं प्रत्येक पृष्ठ पर आध्यात्मिक सूक्तियाँ पवैयाजी की अपनी विशेषता है। विधान के अंत में १२५ ध्यानसूत्र दिये गए है जो नित्य मननीय हैं। जैन पूजांजलि और शक्तिविधान तो भारत भर में प्रसिद्ध है ही फिर भी उन का बहुत सा साहित्य अप्रकाशित है।

उनके द्वारा रचित १५0 पूजने २0 विधान ५00 स्तुतिगीत २५00 आध्यात्मिक गीत हैं। हमारी हार्दिक आकांक्षा है कि उन सब का सम्पूर्ण प्रकाशन हो जाए ताकि समाज पूरा लाभ ले सके। यह विधान पूजन के लिए तो है ही किन्तु स्वाध्याय के लिए भी यह ऐसा प्रकाश स्तम्भ है जो आत्म वैभव का ज्ञान कराने में सक्षम हैं। आशा है समाज इस का भरपूर लाभ उठाएगी।

सौभाग्यमल जैन	**पं. राजमल जैन** B.Com
स्वतंत्रता संग्राम सेनानी	अध्यक्ष
संरक्षक	१0 ललवानीगली, चौक भोपाल

दि. जैन मुमुक्षु मंडल, चौक भोपाल

अनुक्रमणिका

		पृष्ठ क्र.
➡	प्राक्कथन	५
➡	धन्यवाद	६
➡	संपादकीय	७
➡	अपनी बात	९
➡	सैतालीस शक्ति विवरण	११
➡	शक्तियों का परिचय	१५
➡	४७ शक्ति विधान (पीठिका)	२३
➡	आत्म वैभव ४७ शक्ति विधान स्थापना	२७
➡	अष्टक	२८
➡	जयमाला	३०
➡	छंद तरिका	३२
➡	जीवत्व शक्ति	३३
➡	चिति शक्ति	३४
➡	दृशि शक्ति	३६
➡	ज्ञान शक्ति	३७
➡	सुख शक्ति	३९
➡	वीर्य शक्ति	४०
➡	प्रभुत्व शक्ति	४२
➡	विभुत्व शक्ति	४३
➡	सर्वदर्शित्व शक्ति	४५
➡	सर्वज्ञत्व शक्ति	४६
➡	स्वच्छत्व शक्ति	४८
➡	प्रकाश शक्ति	४९
➡	असंकुचित विकासत्व शक्ति	५१
➡	अकार्यकारण शक्ति	५२
➡	परिणम्य परिणामात्मक शक्ति	५४
➡	त्यागोपदान शून्यत्व शक्ति	५५
➡	अगुरुलघुत्व शक्ति	५७
➡	उत्पाद व्यय ध्रुवत्व शक्ति	५८
➡	परिणाम शक्ति	६०
➡	अमूर्तत्व शक्ति	६१
➡	अकर्तृत्व शक्ति	६३

➡	अभोकृत्व शक्ति	६४
➡	निष्क्रियत्व शक्ति	६६
➡	नियतप्रदेशत्व शक्ति,	६७.
➡	स्वधर्मव्यापकत्व शक्ति	६९
➡	साधारण असाधारण शक्ति	७०
➡	अनंतधर्मत्व शक्ति	७२
➡	विरुद्धधर्मत्व शक्ति	७३
➡	तत्त्व शक्ति	७५
➡	अतत्त्व शक्ति	७६
➡	एकत्व शक्ति	७७
➡	अनेकत्व शक्ति	७९
➡	भाव शक्ति	८०
➡	अभाव शक्ति	८१
➡	भावाभाव शक्ति	८३
➡	अभाव भाव शक्ति	८४
➡	भाव भाव शक्ति	८५
➡	अभावाभाव शक्ति	८७
➡	भाव शक्ति	८८
➡	क्रिया शक्ति	९०
➡	कर्म शक्ति	९१
➡	कर्तृत्व शक्ति	९३
➡	करण शक्ति	९४
➡	सप्रदान शक्ति	९५
➡	अपादान शक्ति	९७
➡	अधिकरण शक्ति	९८
➡	सबध शक्ति	१००
➡	पूर्णार्घ्य	१०१
➡	जयमाला	१०४
➡	क्षमापना, शान्ति पाठ, भजन	१०८
➡	ध्यान सूत्र	१०९
➡	पंच परमेष्ठी पूजन, जयमाला	११५
➡	चौबीस तीर्थंकर पूजन जयमाला	११८
➡	ऋषभदेव पूजन	१२१
➡	भजन	१२६

प्राक्कथन

आगम सम्मत पूजायें लिखने में सिद्धहस्त श्री राजमल पवैया द्वारा हिन्दी पद्यों में रचित गणधरवलय ऋषि मंडल विधान की पूजा पढ़कर संतोष हुआ। लौकिक कष्ट निवारण की इच्छा से अनेक साधर्मी बंधु मुझसे ऋषिमंडल विधान के संबंध में मार्ग दर्शन प्राप्त करना चाहते है। अभी तक सस्कृत और हिन्दी में जो ऋषिमंडल विधान यत्र-मंत्र सहित प्रकाशित हुए हैं, उनमें वीतराग देव के सिवाय अन्य दशदिक्पालों व श्री ह्री आदि देवियों की पूजा की जाती हैं। पूजा और मंत्र मे सरागी देवी देवताओ के नामों का उल्लेख होने से मुझे मेरे उन शांति के अभिलाषी बंधुओं के हित की कामना से यह बताना पड़ता है कि देवी देवताओं की पूजा से उनमें लाभ के बजाय हानि की अधिक संभावना है। अपने पुण्य के बिना देवी देवता कुछ नही कर सकते, बल्कि उनकी मान्यता से सम्यकत्व को क्षति पहुंचती है। यहां तक कि आचार्यो के मत अनुसार आकाक्षा (निदान सहित) पूजा से वे सम्यकत्व रहित हो जाते है (आ.देवसेनकृत भाव संग्रह)। श्री पवैया जी ने शान्ति विधान और इन्द्र ध्वज विधान तथा कल्प द्रुम विधान आदि वृहत् विधानों की रचना कर समाज में एक बहुत बड़ी कमी की पूर्ति की है। आप की सभी रचनाए भाषा, छद, भाव और कवित्व की दृष्टि से निर्दोष और आगम सम्मत है। अपने स्वाध्याय के बल पर इन पूजाओं में शास्त्रीय ज्ञान भर दिया है आशा है धार्मिक बंधु इन से लाभ उठाकर इनके अधिकाधिक प्रचार कार्य मे अपना सहयोग प्रदान करेगे।

आपके द्वारा इसी प्रकार ६४ ऋद्धि विधान की रचना की गई है। जो दिगम्बर गुरुओं के तप द्वारा निराकांक्ष रूप से प्रकट होती है। जो उनकी आत्म साधना एवम् आत्म बल का परिचय देती है। उनका वे बिलकुल उपयोग नही करते बल्कि उन्हें इन ऋद्धियों के प्रकट हो जाने का ज्ञान तक नहीं रहता।

आत्मा की अनंत शक्तियों में से आचार्य श्री अमृतचद्र देव ने ४७ शक्तियों का समयसार परिशिष्ट में उल्लेख किया है। श्री पवैयाजी ने प्रत्येक शक्ति का विशद विवेचन कर शक्तियों के माहात्म्य का वर्णन अपनी इस नवीन रचना सैंतालीस शक्ति विधान में कर

एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। जिसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं। इस रचना में उनकी कवित्व प्रतिभा एवं आध्यात्मिकता का विशेष परिचय मिलता है।

आशा है स्वाध्याय प्रेमी बंधु इसका लाभ उठा सकेंगे एवं शिविर आदि में इसका उपयोग कर सबको लाभ पहुँचाएंगे।

(प्रतिष्ठाचार्य) पं. नाथूलाल जैन शास्त्री

दि. ५.६.९२ ४०, सर हुकमचंद मार्ग मोती महल, इन्दौर

धन्यवाद

श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल सीमंधर जिनालय, जवेरी बाजार बम्बई ने सैंतालीस शक्ति विधान के प्रकाशन हेतु ग्रंथमाला के ध्रुव कोष में दस हजार रुपये प्रदान कर उत्साह बढ़ाया है, अतः कोटि-कोटि धन्यवाद।

श्री पदमचन्दजी जैन सराफ अध्यक्ष कुन्दकुन्द कहान स्मृति सभागृह आगरा ने प्रकाशन के पूर्व ही इस विधान की एक हजार प्रतियां क्रय कर उत्साह बढ़ाया है। अतः धन्यवाद।

विधान प्राप्ति-स्थल

—श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर
—श्री सीमंधर जिनालय, जवेरी बाजार, बम्बई
—श्री पूज्य कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट, देवलाली
—श्री कुन्दकुन्द कहान स्मृति सभागृह, आगरा
—श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मन्दिर, भूलेश्वर, बम्बई
—श्री पार्श्वनाथ नया दि. जैन मन्दिर, कलकत्ता
—श्री शीतलचन्द जैन, मारवाड़ी मन्दिर, शक्कर बाजार, इन्दौर
—श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मंडल, चौक भोपाल

संपादकीय

प्रत्येक वस्तु अनन्त गुण-धर्मों से युक्त है। बिना गुण के कोई वस्तु नहीं पाई जाती। जिनदेव का दर्शन पूजन "वन्देतद्गुणलब्धये" निमित्त होता है। प्रत्येक वस्तु तथा व्यक्ति में होने वाला कार्य निजगुण का परिणमन हैं। वस्तु में पाया जाने वाला परिणाम उसमें निहित शक्तियों का परिणाम है। यहां तक कि परस्पर विरुद्ध दो शक्तियां भी स्वयं प्रकाशित होती हैं। अतः अनेकांत ही धर्म का प्राण हैं। एक वस्तु को प्रगट करने वाली परस्पर दो विरुद्ध शक्तियों के प्रकाशित होने का नाम अनेकांत हैं। जिस प्रकार प्राण के बिना जीवन नही होता, उसी तरह अनेकात के बिना धर्म नहीं होता; इस रहस्य को पूरी तरह समझने के लिए आचार्य अमृत चंद्र के द्वारा वर्णित सैतालीस शक्तियों का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

ऐसे महत्वपूर्ण विषय को आधार बनाकर कविवर राजमल जी पवैया ने प्रस्तुत विधान की रचना की है जो वस्तुतः आध्यात्मिक है। यद्यपि व्यक्ति परक शक्ति की पूजा आराधना, उपासना की इस देश मे अन्य मतों में कमी नहीं है तथापि जैन धर्म मे इसका स्वरूप सबसे विलक्षण और मौलिक है।

यह कहना इतना भ्रमपूर्ण है कि जैन धर्म में शक्ति साधना अन्य मतों से ग्रहण की गई हैं वस्तुतः बिना शक्ति के कोई वस्तु नही है। यदि वस्तु में यह शक्ति न पाई जाए तो न तो ससारी जीव हो सकता है न मुक्त। प्रत्येक जीव मे ऐसी शक्ति है कि वह राग से तन्मय होकर संसार का प्रसार कर सकता है। तथा स्वयं का पुरुषार्थ कर विकल्प जालों से भिन्न अपने स्वरूप की प्रसिद्धि कर मुक्त हो सकता है। जैन धर्म मे आत्मधर्म की यह पद्धति सनातन हैं। संसार या मुक्ति किसी परमात्मा या ईश्वर की कृपा या प्रसाद का फल नहीं है। अतएव जब से वस्तु हे तब से उसमें गुण धर्म रूप शक्तियाँ हैं। और उनके कारण ही वस्तु नित्य परिणामी है। यह मान्यता जैन धर्म के सिवाय अन्य मत में नहीं पायी जाती है। किस शक्ति का क्या कार्य है इसका स्पष्ट रूप से वर्णन इस रचना में किया गया है। वास्तव में जैन धर्म में पूजन विधान स्वरूप व्यक्ति परक न होकर गुण तथा भाव परक हैं। अतः सोलह कारण

रत्नत्रय, दस लक्षण आदि पूजा विधान गुणात्मक भावों पर आधारित हैं। यह बात अवश्य हैं कि उन गुणों का आदर्श अवश्य है। प्रस्तु विधान में भी रचनाकार ने सिद्ध परमात्मा को लक्ष कर जिन सैंतालीस शक्तियों की इस बड़ी पूजा की रचना की है वह प्रथम बार किया गया ऐसा सृजनात्मक स्तुत्य कार्य है जो युग युगान्तर तक जिन धर्म के संदेश को सफल रूप में गीतों के माध्यम से गुंजायमान करता रहेगा।

आध्यात्म जैसे दुरूह विषय को सरल शैली में बोलचाल की भाषा में तथा कवित्व रूप में प्रगट करना ये कवि की अपनी विशेषता है। आशा है जैन जगत में पूजा तथा स्वाध्याय का एक साथ लाभ इस रचना से अवश्य प्राप्त करेंगे।

२९.५.९२

डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री
२४३ शिक्षक कॉलोनी नीमच म.प्र.

भजन

शुद्ध सम्यक्त्व स्वघट होवे।
शुद्ध ज्ञान की कला हृदय मे सहज प्रगट होवे॥
पाप ताप संताप मयी मिथ्यात्व विघट होवे।
निज परिणति अनुभूति हृदय में तब झटपट होवे॥
पर परिणति के मोह जाल में भव झंझट होवे।
रुचि स्वभाव की जागे तो चेतन शिवतट होवे॥
निजस्वरूप में एक नहीं पर की खट पट होवे।
एक समय में भवसागर को अंत निकट होवे॥

आत्म चंद्र चमके अनुपम आत्म चंद्र चमके।
परभावों के बदरा विघटें ज्ञान ज्योति दमके॥
जय तप व्रत नक्षत्र खिले उर अंबर में जम के।
अनुभव राका रस बरसाए प्रतिपल थम थम के॥
निज परिणति संगीत सुनाए पावन समशम के।
भ्रमतम जाते ही दिन आए अब शुद्धातम के॥

अपनी बात

प्रत्येक कार्य अपने स्वकाल में ही होता है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह सैंतालीस शक्ति विधान है। आज से सोलह वर्ष पूर्व मेरी पत्नी तारादेवी ने मुझे सैंतालीस शक्ति पर पूज्य कानजी स्वामी के प्रवचन का आत्म प्रसिद्धि ग्रंथ दिया और कहा कि इस पर विधान लिख दो। मैंने थोड़ा सा ही पढ़ा पर समझ में नहीं आया, विधान लिखना तो दूर उसे पूरा पढ़ना समझना भी कठिन लगा; बात आई गई हो गई। सन् ८८ में इन्द्र ध्वज मंडल विधान पूर्ण होने पर पुनः पत्नी ने आग्रह किया और मैं फिर प्रयत्न करके भी इसे नहीं लिख पाया इसी बीच सन् ८९ में पत्नी ने जयपुर में देह परिवर्तन कर लिया। अब कोई प्रेरणा देने वाला नहीं रहा। मैं भी भूल गया कि यह काम करना है।

अचानक इस वर्ष अप्रेल के प्रथम सप्ताह में सोनगढ़ से श्री हिम्मत भाई मेहता भाव नगर निवासी का पत्र आया कि सैतालीस शक्ति पर विधान पूजन नहीं है आप लिखे तो अच्छा है। मैंने आत्म प्रसिद्धि पूरी पढ़ी और साहस पूर्वक महावीर जंयती के दिन चौक जिन मंदिर में लिखने का महूर्त कर दिया। इस की रूप रेखा लेकर मैं इंदौर में प्रतिष्ठाचार्य पंडित नाथूलालजी शास्त्री से मिला उन्होंने कृपापूर्वक उचित मार्गदर्शन दिया ही, प्रोत्साहन भी बहुत दिया। अल्प अवधि में पूज्य कानजी स्वामी के जन्म दिवस वैशाख शुक्ल द्वितीया को यह विधान पूर्ण हो गया। दस बारह दिन पश्चात नीमच से डॉ. देवेन्द्र कुमार जी शास्त्री पधारे उन्होंने अपना बहुमूल्य समय देकर इसे देखा भी और अवश्यक मार्गदर्शन दिया। कुछ सुधार भी किये और इसका सम्पादन भी कर दिया। इस प्रकार यह महत्त्वपूर्ण कार्य अपने स्वकाल में ही पूरा हुआ। बीच का प्रयत्न कुछ काम नहीं आया और अनायास बिना श्रम किये ये कार्य सम्पन्न हुआ। बंबई मुमुक्षु मंडल एवं श्री मुकुन्द भाई खादा के प्रोत्साहन के लिए कृतज्ञ हूं। ग्रन्थ माला के ध्रुवकोष में सहयोग राशि प्रदानकर्ताओं का आभारी हूं। मैंने स्वामी जी के आत्म प्रसिद्धि, आत्म वैभव और प्रवचन रत्नाकर का 11वां भाग का भरपूर उपयोग किया है। मेरी

सहभागिनी इस विधान की प्रेरणा स्रोत तो थी ही किन्तु मुझे पूज्य कानजी स्वामी के निकट ले जाने का श्रेय भी उन्हें ही प्राप्त है। स्वामी जी का मेरे जीवन पर बहुत उपकार है।

जिनका स्नेहमयी आध्यात्मिक सानिध्य पाकर मैं धन्य हुआ जिनके पवित्र आर्शीवाद से मैं यह विधान लिखने में समर्थ हुआ। उन्हीं स्वामी जी को यह विधान सादर समर्पित है। मेरे जीवन काल की यह सर्वोत्तम कृति है, इसीलिए मुझे सर्वाधिक प्रसन्नता है। आशा है धर्म प्रेमी बंधु इसका पूरा लाभ उठाएंगे। प्राक्कथन एवं संपादन के लिए उपरोक्त दोनों विद्वान साधुवाद के पात्र हैं।

राजमल पवैया

भजन

माई री मैं तो वन में जाऊँगी।
संवर पूर्वक तप धारूँगी निज को ध्याऊँगी॥
संयम के पुष्पों को चुनचुन हृदय सजाऊँगी।
जय तप व्रत या नियम सुहानी बीन बजाऊँगी॥
निज चैतन्य चंद्र की शीतलता को पाऊंगी।
भव दो भव में कर्म नाशकर शिवपुर जाऊँगी॥

भजन

मैंने ध्रुव वैभव धन पायो।
नाचत गावत हर्षित पुलकित समकित उरछायो॥
भ्रम कुज्ञान कुचारित मेरो सम्यक् कहलायो।
मिथ्यादर्शन ने प्रभु जग में प्रतिपल बहकायो॥
निज दर्शन बिन चारों गति में भवदुख लहरायो।
गुरु उपदेश सुनत ही मैंने चिंता मणि पायो॥

सैंतालीस शक्ति विवरण

१. आत्म द्रव्य के कारणभूत ऐसे चैतन्यमात्र भाव का धारण जिसका लक्षण अर्थात् स्वरूप है ऐसी जीवत्वशक्ति। (आत्मद्रव्य के कारणभूत ऐसे चैतन्यमात्रभावरूपी भावप्राण का धारण करना जिसका लक्षण है ऐसी जीवत्व नामक शक्ति ज्ञानमात्र भाव में—आत्मा में—उछलती है)।

२. अजड़त्व स्वरूप चितिशक्ति (अजड़त्व अर्थात् चेतनत्व जिसका स्वरूप है ऐसी चितिशक्ति।)

३. अनाकार उपयोगमयी दृशिशक्ति। (जिसमें ज्ञेयरूप आकार अर्थात् विशेष नहीं है ऐसे दर्शनोपयोगमयी—सत्तामात्र पदार्थ में उपयुक्त होने रूप—दृशिशक्ति अर्थात् दर्शनक्रियारूप शक्ति।)

४. साकार उपयोगमयी ज्ञानशक्ति। (जो ज्ञेय पदार्थों के विशेषरूप आकारों में उपयुक्त होती है ऐसी ज्ञानोपयोगमयी ज्ञानशक्ति।)

५. अनाकुलता जिसका लक्षण अर्थात् स्वरूप है ऐसी सुख॰ शक्ति।

६. स्वरूप की (-आत्मस्वरूप की) रचना की सामर्थ्यरूप वीर्यशक्ति।

७. जिसका प्रताप अखण्डित है अर्थात् किसी से खण्डित की नहीं जा सकती ऐसे स्वातंत्र्य से (-स्वाधीनता से) शोभायमानपना जिसका लक्षण है ऐसी प्रभुत्वशक्ति।

८. सर्व भावों में व्यापक ऐसे एक भावरूप विभुत्वशक्ति। (जैसे, ज्ञानरूपी एक भाव सर्व भावों में व्याप्त होता है।)

९. समस्त विश्व के सामान्य भाव को देखने रूप से (अर्थात् सर्व पदार्थों के समूहरूप लोकालोक को सत्तामात्र ग्रहण करने रूप से) परिणमित ऐसे आत्मदर्शनमयी सर्वदर्शित्वशक्ति।

१०. समस्त विश्व के विशेष भावों को जानने रूप से परिणमित ऐसे आत्मज्ञानमयी सर्वज्ञत्वशक्ति।

११. अमूर्तिक आत्मप्रदेशों में प्रकाशमान लोकालोक के आकारों से मेचक (अर्थात् अनेक-आकार रूप) ऐसा उपयोग जिसका लक्षण है ऐसी स्वच्छत्वशक्ति। (जैसे दर्पण की स्वच्छत्वशक्ति से उसकी पर्याय में घटपटादि प्रकाशित होते हैं, उसी प्रकार आत्मा की स्वच्छत्वशक्ति से उसके उपयोग में लोकालोक के आकार प्रकाशित होते हैं।)

१२. स्वयं प्रकाशमान विशद (स्पष्ट) ऐसी स्वसंवेदनमयी (-स्वानुभवमयी) प्रकाशशक्ति।

१३. क्षेत्र और काल से अमर्यादित ऐसी चिद्विलास स्वरूप (-चैतन्य के विलासस्वरूप) असंकुचित विकाशत्वशक्ति।

१४. जो अन्य से नही किया जाता और अन्य को नहीं करता ऐसे एक द्रव्यस्वरूप अकार्यकारणत्व शक्ति। (जो अन्य का कार्य नही है और अन्य का कारण नही है ऐसा जो एक द्रव्य उस-स्वरूप अकार्यकारणत्वशक्ति।)

१५. पर और स्वय जिसका निमित्त है ऐसे ज्ञेयाकारो और ज्ञानाकारो को ग्रहण करने और ग्रहण कराने के स्वभावरूप परिणम्य परिणामकत्वशक्ति। (स्व-पर के ज्ञाता होने का तथा स्व-पर का ज्ञेय होने का आत्मा का जो स्वभाव उस स्वभावरूप परिणम्य परिणामकत्व शक्ति।)

१६. जो कम बढ़ नही होता ऐसे स्वरूप मे नियतत्वरूप (-निश्चित्तया यथावत् रहने रूप-) त्यागोपादानशून्यत्वशक्ति।

१७. षट्स्थानपतित वृद्धिहानिरूप से परिणमित, स्वरूपप्रतिष्ठत्व का कारण रूप (-वस्तु के स्वरूप मे रहने के कारण रूप) ऐसा जो विशिष्ट (-खास) गुण है उस-स्वरूप अगुरुलघुत्वशक्ति। (इस षट्स्थानपतित हानिवृद्धि का स्वरूप 'गोम्मटसार' ग्रथ से जानना चाहिये। अविभाग प्रतिच्छेदो की सख्यारूप षट्स्थानो मे समाविष्ट-वस्तुस्वभाव की हानि-वृद्धि जिससे (-जिस गुणसे) होती है और जो (गुण) वस्तु को स्वरूप मे स्थिर होने का कारण है ऐसा कोई गुण आत्मा मे है; उसे अगुरुलघुत्वगुण कहा जाता है। ऐसी अगुरुलघुत्वशक्ति भी आत्मा मे है।)

१८. क्रमवृत्तिरूप और अक्रमवृत्तिरूप वर्त्तन जिसका लक्षण है ऐसी उत्पादव्ययध्रुवत्वशक्ति। (क्रमवृत्तिरूप पर्याय उत्पादव्ययरूप है और अक्रमवृत्तिरूप गुण, ध्रुवत्वरूप है।)

१९. द्रव्य के स्वभावभूत ध्रौव्य-व्यय-उत्पाद से आलिगित (-स्पर्शित), सदृश और विसदृश जिसका रूप है ऐसे एक अस्तित्वमात्रमयी परिणामशक्ति।

२०. कर्मबन्ध के अभाव से व्यक्त किये गये, सहज, स्पर्शादिशून्य (-स्पर्श, रस, गध और वर्ण से रहित) ऐसे आत्मप्रदेशस्वरूप अमूर्तत्वशक्ति।

२१. समस्त, कर्मों के द्वारा किये गये, ज्ञातृत्वमात्र से भिन्न जो परिणाम उन परिणामों के करणके उपरमस्वरूप (उन परिणामों को करने की निवृत्तिरूप) अकर्तृत्वशक्ति। (जिस शक्ति से आत्मा ज्ञातृत्व के अतिरिक्त, कर्मों से किये गये परिणामों का कर्ता नहीं होता, ऐसी अकर्तृत्व नामक एक शक्ति आत्मा में है।।

२२. समस्त, कर्मों से किये गये, ज्ञातृत्वमात्र से भिन्न परिणामों के अनुभव की (-भोक्तृत्वकी) उपरमस्वरूप अभोक्तृत्वशक्ति।

२३. समस्त कर्मों के उपरमसे प्रवृत्त आत्मप्रदेशों की निस्पन्दतास्वरूप (-अकम्पतास्वरूप) निष्क्रियत्वशक्ति। (जब समस्त कर्मों का अभाव हो जाता है तब प्रदेशों का कम्पन मिट जाता है इसलिये निष्क्रियत्व शक्ति भी आत्मा में है।)

२४. जो अनादि संसार से लेकर संकोचविस्तार से लक्षित है और जो चरम शरीर के परिमाण से कुछ न्यून परिमाण से अवस्थित होता है ऐसा लोकाकाश के माप जितना मापवाला आत्म-अवयवत्व जिसका लक्षण है ऐसी नियतप्रदेशत्वशक्ति। (आत्मा के लोक परिमाण असंख्य प्रदेश नियत ही हैं। वे प्रदेश संसार अवस्था में संकोचविस्तार को प्राप्त होते है और मोक्ष-अवस्था में चरम शरीर से कुछ कम परिमाण से स्थित रहते हैं।)

२५. सर्व शरीरों में एकस्वरूपात्मक ऐसी स्वधर्मव्यापकत्वशक्ति। (शरीर के धर्मरूप न होकर अपने अपने धर्मों में व्यापने रूप शक्ति सो स्वधर्मव्यापकत्वशक्ति है।)

२६. स्व-परके समान, असमान और समानासमान ऐसे तीन प्रकार के भावों की धारण-स्वरूप साधारण-असाधारण- साधारणासाधारण-धर्मत्वशक्ति।

२७. विलक्षण (-परस्पर भिन्न लक्षणयुक्त) अनन्त स्वभावों से भावित ऐसा एक भाव जिसका लक्षण है ऐसी अनन्तधर्मत्वशक्ति।

२८. तद्रूपमयता और अतद्रूपमयता जिसका लक्षण है ऐसी विरुद्धधर्मत्वशक्ति।

२९. तद्रूप भवनरूप ऐसी तत्त्वशक्ति। (तत्स्वरूप होनेरूप अथवा तत्स्वरूप परिणमनरूप ऐसी तत्त्वशक्ति आत्मा में है। इस शक्ति से चेतन चेतनरूप से रहता है-परिणमित होता है।)

३०. अतद्रूप भवनरूप ऐसी अतत्त्वशक्ति। (तत्स्वरूप नहीं होनेरूप अथवा

तत्स्वरूप नहीं परिणमनेरूप अतत्त्वशक्ति आत्मा में है। इस शक्ति से चेतन जड़रूप नहीं होता।)

३१. अनेक पर्यायो में व्यापक ऐसी एकद्रव्यमयतारूप एकत्व शक्ति।

३२. एक द्रव्य से व्याप्य (-व्यापनेयोग्य) अनेक पर्यायमयपनारूप अनेकत्वशक्ति।

३३. विद्यमान-अवस्थायुक्ततारूप भावशक्ति। (अमुक अवस्था जिसमें विद्यमान हो उस रूप भावशक्ति)।

३४. शून्य (-अविद्यमान) अवस्थायुक्तता रूप अभावशक्ति। (अमुक अवस्था जिसमे अविद्यमान हो उस रूप अभावशक्ति।)

३५. प्रवर्तमान पर्याय के व्ययरूप भावाभावशक्ति।

३६. अप्रवर्तमान पर्याय के उदयरूप अभावभावशक्ति।

३७. प्रवर्तमान पर्याय के भवनरूप भावभावशक्ति।

३८. अप्रवर्तमान पर्याय के अभवनरूप अभावाभाव शक्ति।

३९. (कर्ता, कर्म आदि) कारकों के अनुसार जो क्रिया उससे रहित भवनमात्रमयी (-होनेमात्रमयी) भाव शक्ति।

४०. कारकों के अनुसार परिणमित होने रूप भावमयी क्रियाशक्ति)।

४१. प्राप्त किया जाता जो सिद्धरूप भाव है, उसमयी कर्मशक्ति।

४२. होनेरूप जो सिद्धरूप भाव है, उसके भावकत्वमयी कर्तृत्वशक्ति।

४३. प्रवर्तमान भाव के भवन को (-होने की) साधकतमपनेमयी (-उत्कृष्ट साधकत्वमयी, उग्र साधनत्वमयी) करणशक्ति।

४४. अपने द्वारा दिया जाता जो भाव उसके उपेयत्वमय (उसे प्राप्त करने के योग्यपनामय, उसे लेने के पात्रपनामय) सम्प्रदानशक्ति।

४५. उत्पादव्यय से आलिंगित भाव का अपाय (-हानि, नाश) होने से हानि को प्राप्त न होने वाली ध्रुवत्वमयी अपादान शक्ति।

४६. भाव्यमान (अर्थात् भावने मे आता) भावों की आधारत्वमयी अधिकरणशक्ति।

४७. स्वभावमात्र स्व-स्वामित्वमयी सम्बन्धशक्ति। (अपना भाव अपना स्व है और स्वय उसका स्वामी है ऐसी सम्बन्धमयी सम्बन्धशक्ति।

सकल विकल्प वमन करके जो निज स्वभाव में रमता है।
वही अतीन्द्रिय सुखमयता है सिद्ध शिला पर जमता है॥

आत्मवैभव

सैंतालीस शक्ति परिचय

(वीरछन्द)

१-जीवत्व शक्ति

आत्म द्रव्य को कारणभूत स्वलक्षण ध्रुव चैतन्य स्वरूप।
भाव प्राण धारण करती है यह जीवत्त्व शक्ति अनुरूप॥

२-चिति शक्ति

चिति स्व शक्ति अजड़त्व स्वरूपी चेतनत्व से ओतःप्रोत।
त्रैकालिक चिति शक्ति जीव की चिन्मय चिद्रूपी ध्रुव स्रोत॥

३-दृशि शक्ति

अनाकार उपयोग मयी है दर्शन क्रिया रूप दृशि शक्ति।
ज्ञेय रूप आकार न किंचित है पर से उपयोग विभक्ति॥

४-ज्ञान शक्ति

ज्ञान शक्ति ज्ञानोपयोग मय है साकार सहज उपयुक्त।
ज्ञान सूर्य कैवल्यज्ञान की महिमा पा हो जाता मुक्त॥

५-सुख शक्ति

आकुलता का अंश न जिस में पूर्ण अनाकुल अति सुखवंत।
है सुख शक्ति अपूर्व जीव की सदा निराकुल गरिमावंत॥

संवर का संगीत श्रवण कर आस्रव हो जाता अवरुद्ध।
चरण निर्जरा जब पखारती चेतन हो जाता है शुद्ध॥

६-वीर्य शक्ति

वीर्य शक्ति मे स्वरूप रचना की सामर्थ्य अटूट अनंत।
बल अनत प्रगटित होते ही चेतन होता सिद्ध महंत॥

७-प्रभुत्वशक्ति

सदा प्रताप अखडित जिसका एक प्रभुत्व शक्ति अनुपम।
है स्वाधीन पने से ही शोभायमान यह शक्ति परम॥

८-विभुत्व शक्ति

सब भावो में व्यापक ऐसी भावरूप है शक्ति विभुत्व।
ज्ञानरूप ही एक भाव है सब भावो मे व्यापक तत्व।

९-सर्वदर्शित्व शक्ति

भव्य सर्वदर्शित्व शक्ति सामान्य भाव से परिणमती।
लोकालोक पदार्थ सर्व को अवलोकन प्रतिपल करती॥

१०-सर्वज्ञत्व शक्ति

सर्वज्ञत्व शक्ति चेतन की आत्मज्ञान मय ख्याता है।
सकल द्रव्यगुण पर्यायो का ज्ञायक युगपत ज्ञाता है॥

११-स्वच्छत्व शक्ति

आत्मप्रदेश प्रकाशमान हैं जिसमें लोकालोकाकार।
यह स्वच्छत्व शक्ति की महिमा है उज्ज्वलता का भंडार॥

१२-प्रकाश शक्ति

स्वय प्रकाशमान अति निर्मल विशद स्व संवेदन मय है।
यही प्रकाश शक्ति का गुण है सदा प्रकाशित गुण मय है॥

चिन्मय ज्योति स्वरूप आत्मा सहज अभेद अनूप अखंड।
सहज स्वसत्व मात्र अविनाशी दिव्य ज्योति संपूर्ण प्रचंड॥

१३-असंकुचित, विकासत्व शक्ति

क्षेत्र काल से सदा अमर्यादित चैतन्य विलास स्वरूप।
असकुचित विकास शक्ति ही आत्म विकास मयी चिद्रूप॥

१४-अकार्यकारणत्व शक्ति

अकार्यकारण शक्ति अनूठी कारण कार्य नहीं परका।
शक्तिमान स्वातंत्र्य स्वरूपी परका भार न तिल भरका॥

१५-परिणम्य परिणामकत्व शक्ति

परिणम्य परिणामकत्व शक्ति पूर्ण शक्ति है अति पावन।
ज्ञेयाकार तथा ज्ञानाकारों का ग्रहण स्वभाव सघन॥

१६-त्यागोपादान शून्यत्वशक्ति

त्यागोपादान शून्यत्व की शक्ति स्वरूप नियत निश्चित।
निज स्वरूप मे कभी न घट बढ होती है किंचित निर्मित॥

१७-अगुरु लघुत्व शक्ति

षडगुण वृद्धि हानि रूपी परिणमन स्वतत्र सदा होता।
अगुरुलघुत्व शक्ति का उपवन स्व प्रतिष्ठ निज मे होता॥

१८-उत्पादव्यय ध्रुवत्व शक्ति

है उत्पाद व्यय ध्रुवत्व की शक्ति सदा क्रम अक्रमरूप।
क्रम प्रवृत्ति पर्याय तथा अक्रम प्रवृत्ति गुण ध्रुवत्व रूप॥

१९-परिणाम शक्ति

व्यय उत्पाद ध्रौव्य आलिगित सदृश असदृश द्रव्य स्वभाव।
है अस्तित्व मयी परिणाम स्व शक्ति जीव का यही स्वभाव॥

यदि प्रमाद विरहित प्रज्ञा है तो फिर दूर न निज कल्याण।
यदि प्रमाद साम्राज्य हृदय में तो संसार भ्रमण ही मान॥

२०-अमूर्तत्व शक्ति

वर्ण गंध रस स्पर्श रहित हैं आत्म प्रदेश सदैव त्रिकाल।
अमूर्तत्व की शक्ति जीव की इन्द्रिय ग्राह्य नहीं सुविशाल॥

२१-अकर्तृत्व शक्ति

उपरमरूपी निवृत्ति स्वरूपी अकर्तृत्व की शक्ति महान।
कोई कर्म भाव परिणाम नहीं करती बस ज्ञाता ज्ञान॥

२२-अभोक्तृत्व शक्ति

ज्ञान भाव का भोग सदा उपरम स्वभाव अनुभवमय है।
अभोक्तृत्व की शक्ति अनोखी निज स्वभाव निजगुणमय है॥

२३-निष्क्रियत्वशक्ति

कर्म जनित कंपन से विरहित है निष्कंप अकंप स्वरूप।
निष्क्रियत्व की शक्ति जीव की त्रैकालिक है उपरस रूप॥

२४-नियत प्रदेशत्व शक्ति

नियत प्रदेश शक्ति से अपने रहती लोकाकाश प्रमाण।
है संकोच विस्तार जगत में मुक्ति प्राप्ति पर अचल महान॥

२५-स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति

स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति का एक स्वरूपात्मक निज रूप।
देह धर्म होती न कभी भी निजस्वधर्म व्यापक अनुरूप॥

२६-साधारण असाधारण साधारणासाधारण धर्मत्व शक्ति

साधारण असाधारण अरु साधारण असाधारण धर्मत्व।
यही शक्ति त्रय भावों को धारण करती है सहज निजत्व॥

२७-अनंत धर्मत्व शक्ति

है अनंत धर्मत्व शक्ति लक्षण है एक विलक्षण भाव।
भावित सदा अनंत स्वभावों से ऐसा है एकीभाव॥

२८-विरुद्धधर्मत्व शक्ति

है विरुद्ध धर्मत्व शक्ति लक्षण तत् अतत् रूप मयता।
तत् स्वरूप है अतत् रूप है निज स्वरूप में तन्मयता॥

२९-तत्त्व शक्ति

तत्व शक्ति तद्रूप भवन मयता स्वरूप परिणमन स्वतंत्र।
इसी शक्ति से चेतन चेतन रहता कभी न हो परतंत्र॥

३०-अतत्त्व शक्ति

अतद्रूपमय भवन रूप है शक्ति अतत्व आत्मा की।
चेतन जड़ होता न कभी भी महिमा सब निजात्मा की॥

३१-एकत्वशक्ति

एकद्रव्यमयपने रूप पर्याय अनेकों में व्यापक।
ऐसी है एकत्व शक्ति यह अनेकत्व की परिचायक॥

३२-अनेकत्व शक्ति

है अनेक पर्यायमयपना एक द्रव्य से व्यापक जो।
अनेकत्व की शक्ति प्रभावी ज्ञान स्वरूप नियामक जो॥

३३-भाव शक्ति

विद्यमान पर्याय अवस्था रूप मय पना जिसका काम।
भाव शक्ति परिणमन कर रही ज्ञानी में निर्मल परिणाम॥

सम्यक्दर्शन की घातक है अनंतानुबंधी की चाल।
एक देश संयम घातक अप्रत्याख्यानावरणी जाल॥

३४-अभाव शक्ति

शून्य अवस्था पना रूप सर्वदा अविद्यमान पर्याय।
इसी अभाव शक्ति के कारण है अभाव पर का शिवदाय॥

३५-भाव अभाव शक्ति

वर्त्तमान पर्याय भावमय दूजे समय अभावमयी।
भाव अभाव शक्ति की महिमा है चैतन्य स्वभावमयी॥

३६-अभावभाव शक्ति

विद्यमान पर्याय व्यय हुई उदय हुई दूजी पर्याय।
एक अभाव शक्ति है दूजी भाव शक्ति है ज्ञान प्रदाय॥

३७-भाव भाव शक्ति

वर्त्तमान पर्याय भावमय भवनरूप प्रतिसमय नयी।
भावभाव शक्ति की महिमा ज्ञानमयी त्रैलोक्य जयी॥

३८-अभाव अभाव शक्ति

राग विभाव अभाव सर्वथा आगे भी है सदा अभाव।
शक्ति अभाव अभाव जीव की उज्ज्वल है चैतन्य स्वभाव॥

३९-भाव शक्ति

कर्त्ता कर्म क्रियादि कारको से जो विरहित भवन स्वरूप।
भाव शक्ति चेतन की अद्भुत है त्रिकाल अविकल्प स्वरूप॥

४०-क्रिया शक्ति

क्रिया शक्ति से ज्ञान क्रियाही करता रहता है ज्ञायक।
राग क्रिया से सदा दूर रह हो जाता त्रिभुवन नायक॥

पूर्ण देश संयम में घातक प्रत्याख्यानावरणी जाल।
यथाख्यात चारित में घातक सदा संज्वलत का जजाल॥

४१-कर्म शक्ति

कर्म शक्ति चेतन की अपनी सिद्ध रूप भावों का स्रोत।
दर्शन ज्ञान चरित्र मयी पर्यायों से है ओतः प्रोत॥

४२-कर्तृत्व शक्ति

सिद्ध रूप भावना सु भावकपना मयी कर्तृत्व अनूप।
कर्तृ शक्ति का ठाठ निराला निज स्वरूप के ही अनुरूप॥

४३-करण शक्ति

साधक साधन पनामयी है करण शक्ति प्रतिसमय प्रसिद्ध।
ज्ञायक गुणी स्वभाव वान है करण शक्ति से होता सिद्ध॥

४४- संप्रदान शक्ति

लेने देने वाला पात्र स्वय ही शुद्ध स्वभावी है।
सप्रदान की शक्ति भरी है साम्यभाव समभावी है॥

४५- अपादान शक्ति

हानि नाश से हानि न पाता अपादान की है ध्रुव शक्ति।
आलिंगित उत्पाद व्ययों से सदा ध्रौव्य से है संयुक्त॥

४६- अधिकरण शक्ति

भाव्यमान भावनाधार है शक्ति अधिकरण बलशाली।
चेतन का आधार स्वचेतन पर से पृथक ध्रौव्य लाली॥

मदोन्मत्त जीव ही होता अप्रतिबुद्ध राग में चूर।
दर्शमोह जय करने वाला प्राणी रागों से अतिदूर॥

४७- संबंध शक्ति

स्वस्वामित्व मय ही स्वभाव है स्वस्वामित्त्व मय ही सबध।
कोई नही किसी का स्वामी अत जीव है सदा अबध॥
सैंतालीस शक्तियाँ अद्‌भुत है प्रत्येक जीव के पास।
शक्ति अनतो का स्वामी चैतन्य राज कर निज मे वास॥

❋ ❋ ❋

छंद-राजधुन

रागी कर्म बाँधता अरागी है अबध।
मोहराग द्वेष से नही है सबध॥
वीतराग जो हुआ वही हुआ है मुक्त।
रागी जीव कर्म से हुआ है सयुक्त।
पुण्य पाप राग भाव सर्व हेय है।
वीतराग भाव ही सदा उपेय है॥
वीतराग बनके करो कर्म का अभाव।
शीघ्र ही प्रगट करो अपना स्वभाव॥
प्रगट करोगे यदि शक्तियाँ अनत।
सर्वज्ञ पद पाके होगे अरहंत॥
तुम्ही शुद्ध बुद्ध सिद्ध भगवान हो।
अनादि हो अनत हो महामहान हो॥
शक्तियो की व्यक्ति अब करना है तुम्हें।
मोहराग कर्म सभी हरना है तुम्हे॥
एक मात्र श्रेष्ठ मार्ग यहीं है त्रिकाल।
अपने स्वरूप की ही करना है सभाल॥

परज्ञेयों से परे सहज चैतन्य स्वभाव मात्र ज्ञेय।
इसका ही अनुभव करने से मिट जाता भव का फेरा॥

ॐ

सैंतालीस शक्ति विधान

पीठिका

सोरठा—सिद्ध अनंतानंत महाशक्ति शाली सभी।
शक्ति सर्वकर व्यक्त आप हुए परमात्मा॥
सब जीवों के पास सभी शक्ति अव्यक्त हैं।
सैंतालीस सु मुख्य शोभित प्रभुपूजन करूँ॥

- छंद-गीतिका -

शक्ति सैंतालीस अद्भुत आत्म वैभव की महान।
सभी जीवों में सदा ही सदा से हैं विद्यमान॥
आवरण इन पर पड़ा है इसलिए अव्यक्त हैं।
वे प्रगट करते इन्हें जो सिद्ध प्रभु के भक्त हैं॥१॥

भूल निज वैभव स्वयं से अपरिचित हैं जगत जीव।
इसलिए भव भ्रमण से भ्रमते रहे हैं ये सदीव॥
यदि स्वयं को जानते तो शक्तियाँ होतीं प्रगट।
कर्म शक्ति विनष्ट होती दोष सब होते विघट॥२॥

बस इसी पुरुषार्थ में सक्षम सदा है आत्मा।
किन्तु निज को भूल कर यह बना है बहिरात्मा॥
मोह क्षोभ अनादि से इसके हृदय में व्याप्त है।
वीतराग स्वरूप हित शुद्धात्म ही पर्याप्त है॥३॥

बुद्धि कर्त्ता भोक्ता की बनी है अज्ञान से।
नष्ट होगी पूर्ण सारी एक निज के भान से॥
स्व पर ज्ञान विवेक से निजआत्म का चिन्तन करूँ।
स्वानुभूति महान द्वारा स्वयं का दर्शन करूँ॥४॥

द्रव्यलिंग को मोक्षमार्ग मानना पूर्णत है अज्ञान।
भावलिंग बिन मुक्ति पथ का होता कभी नही निर्माण॥

दीपमाला मुस्कराएगी सहज आलोक से।
प्रगट होगी शक्तियाँ निज आत्म के अवलोक से॥
सहस्त्रो रवि हार मानेगे स्वय की प्रभा से॥
सर्व लोका लोक दमकेगा स्वय की विभा से॥५॥

एक हूँ मै तो सदा से शक्तियो का स्रोत हूँ।
निजानद स्वरूप हूँ शिव अमृत ओत प्रोत हूँ॥
शक्तियाँ निज जानने के लिए करता यह विधान।
आत्म शक्ति महान है पर्याप्त है सब मे प्रधान॥६॥

अकर्तृत्व स्वभाव मेरा स्वय मे सक्रिय हुआ।
पर विभावो के लिए अब पूर्णत· निष्क्रिय हुआ॥
ज्ञान अजन की शलाका नयन मे ऑजी अभी।
मोह भ्रम मिथ्यात्व भागा आस्रव के सग सभी॥७॥

शस्त्र सवर निर्जरा के भर लिए तूणीर मे।
धनुष मेरा ध्यान का है शक्ति ध्रुव रणधीर मे॥
ध्यान कल्पद्रुम स्वय का सदा फलता फूलता।
क्षपक उपशम श्रेणि पाकर यह स्वय मे झूलता॥८॥

बारवॉ जब लाघता है तेरवॉ होता प्रगट।
विभावो को जीत लेता मोह सब होता विघट॥
क्षीण कर नैराश्य नभ यह मुक्ति का पाता गगन।
ज्ञान दर्शन वीर्य सुख पा स्वय मे होता मगन॥९॥

गुणस्थानातीत भी होता स्वय की शक्ति से।
पूर्ण शिवसुख स्वघट होता आत्मा की भक्ति से॥
शक्ति चेतन मे अनतानत ध्रुव विख्यात है।
व्यक्ति होती सिद्ध प्रभु को त्रिकाली प्रख्यात हैं॥१०॥

अशुचि देह से भिन्न आत्मा का जो करते सदैव ध्यान।
सर्व भाव श्रुत के ज्ञानी हो पाते सहज मुक्ति निर्वाण।

अतः मैं भी शक्तियाँ पाऊँ स्वयं की शक्ति से।
सिद्धपद की प्राप्ति करलूँ शक्तियों की व्यक्ति से॥
अचल अनुपम ध्रुव स्वगति पाए हुए भगवान सब।
हृदय से वंदन करूँ मै परम सिद्ध महान सब॥११॥

छंद-नित आत्म का विकास करूँ।
ज्ञान का प्रकाश करूँ॥
मोह का विनाश करूँ।
मोक्ष में निवास करूँ॥
एक यही काम करूँ।
शीघ्र ध्रुवधाम वरू॥

छंद-पदपादाकुलक-मैं वीतराग शिवशंकर हूँ॥
मै निर्विकार अभ्यंकर हूँ।
मैं दर्शन ज्ञान स्वरूपी हूँ,
मैं सुखसागर चिद्रूपी हूँ,
मैं शुद्ध स्वभाव अनूपी हूँ,
मैं त्रैकालिक अविनश्वर हूँ॥ मैं. ॥

मैं गुण अनंत का स्वामी हूँ,
मै सिद्ध पुरी विश्रामी हूँ,
मैं निजानंद अविरामी हूँ,
मैं शुद्धबुद्ध सिद्धेश्वर हूँ॥ मैं. ॥

मैं निष्कलंक परमेश्वर हूँ,
मैं शाश्वत ध्रुव अवनीश्वर हूँ,
मै नित्यनिरंजन शिव कर हूँ,
मैं शक्ति सिंधु ज्ञानेश्वर हूँ। मैं. ॥
मैं निर्विकार अभ्यंकर हूँ।
मैं वीतराग शिव शकर हूँ॥

शुद्धज्ञानमय सर्व जीव हैं ऐसा हो निश्चय समभाव।
यही श्रेष्ठ सामायिक जानो यही श्रेष्ठ है आत्म स्वभाव॥

वीरछंद

शुद्ध रूप परिणत होती है शुद्ध ज्ञान की ही पर्याय।
क्रम प्रवृत्ति अक्रम प्रवृत्ति का वर्त्तन ही लक्षण शिवदाय॥
ध्रुवरूपी अक्रमवर्त्तीगुण क्रमवर्त्ती है व्यय उत्पाद।
इसका ही क्रमबद्ध नाम है जिनशासन कथनी अविवाद॥१॥

साता तथा असाता का उपयोग नहीं करता ज्ञायक।
निजस्वभाव रसकाही तो उपयोग कर रहा शिवनायक॥
किसी शक्ति का भी परिणमन नहीं होता निज के प्रतिकूल।
सभी शक्तियाँ परिणत होतीं शाश्वत ध्रुव स्वभाव अनुकूल॥२॥

तीर्थंकर सम कुन्दकुन्द ने दियामुक्ति पथ का संदेश।
अमृत चद्र ने गणधर के सम व्याख्या की अनुपम दिव्येश॥
कुन्दकुन्द के समयसार में शक्ति अनतो का वर्णन।
अमृतचद्र के समय कलश मे सैतालीस शक्ति वर्णन॥३॥

त्रिभुवनजयी आत्मा सबकी शक्ति अनतो से सम्पन्न।
अमित अनत शक्ति से होती सैंतालीस शक्ति उत्पन्न॥
शक्ति सिद्धि का एक मात्र पुरुषार्थ आत्मा काही ध्यान।
होती है पुरुषार्थ सिद्धि हो जाते भव सकट अवसान॥४॥

तू ही ऐसा शक्तिवान है मुक्त बने या ससारी।
निज स्व शक्ति अवलबन ले तो होगा शिव सुख अधिकारी॥
तेरी शक्ति स्वय विलसित है राग द्वेष के भावों में।
यही शक्ति यदि जग जाए तो आए सहज स्वभावों में॥५॥

❋❋❋

राग द्वेष के त्याग पूर्वक होता सामायिक चारित्र।
उत्तम शुद्ध भाव जाग्रत हो रहता आत्मा परम पवित्र॥

ॐ

आत्म वैभव सैंतालीस शक्ति विधान प्रारंभ

स्थापना

वीरछंद

श्री जिनेन्द्र प्रभु शक्ति अनंतों के स्वामी निजगुण सम्पन्न।
ऐसी पावन शक्ति अनंतानंत करूँ मैं भी उत्पन्न॥
अरहंतों सिद्धों ने अपनी शक्ति अनत प्रकाशित कर।
निजानंद रस का समुद्र पाया निज आत्म विकासित कर॥१॥

इन्हीं शक्तियों से होता है प्रगट आत्म वैभव अनुपम।
सिद्धशिला पर सदा विराजित होते प्राणी कर उद्यम॥
गुण अनंत है शक्ति अनंतानंत जीव के भीतर हैं।
मुख्य शक्तियाँ सैतालीस प्रगट होती शिव सुखकर हैं॥२॥

छंद-राधिका

सिद्धत्व शक्ति का सिंधु सहज अविनाशी।
है असिद्धत्व भावों का पूर्ण विनाशी॥
निज अनुभव रस धारा का स्रोत मधुरतम।
है ज्ञानानंद स्वरूप स्वयं में सक्षम॥३॥

सद्धर्म तत्त्व कथनी का अर्थ न जाना।
अपना विपरीत स्वरूप सदा ही माना॥
इसलिए भ्रमा चारों गतियों में स्वामी।
मिथ्यात्व मोह अब जीतू अंतर्यामी॥४॥

मै अकर्तृत्व की शक्ति सदैव जगाऊँ।
कर्तृत्व भाव को पूरा नाथ मिंटाऊँ॥

जिन आज्ञा का पथ्य ग्रहण कर भ्रमण रोग मिट जाएगा।
जिन आगम की औषधि पीले शुद्ध सिद्ध बन जाएगा॥

यह महा शक्ति मेरे जीवन मे जागे।
प्रभु दुष्प्रवृत्ति मेरी सारी ही भागे॥५॥

तुव पूजन कर शक्तिया अनत प्रकाशूँ।
सपूर्ण शक्ति की व्यक्ति महान विकासूँ॥
हैं सैतालीस शक्तिया मुख्य हमारी।
मुझको सुबुद्धि दो हे जिनवर अविकारी॥६॥

ॐ ह्री अनतानत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत्शक्ति मडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिन् अत्र अत्र अवतर अवतर सवौष्ट अहुवानन।

ॐ ह्री अनतानत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत् शक्ति मडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिन् अत्रतिष्ठ तिष्ठ ठ ठः स्थापनम्।

ॐ ह्री अनतानत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत् शक्ति मडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिन् अत्र ममसन्निहितो भवभव वषद् सन्निधिकरण॥

अष्टक

छंद ताटंक

सहजज्ञान गगा के जल से सर्व कर्म रज धोऊँगा।
सम्यक दर्शन का सुबीज ही अब इस भव मे बोऊगा॥
सैतालीस शक्तियाँ अद्भुत प्रगट करूँगा हे जिन राज।
विमल भाव उर मे जागा है पाऊँगा मै निज पद राज॥१॥

ॐ ह्री अनतानत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत् शक्ति मडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिन्‌ जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलनिर्वपामीति स्वाहा॥

सहजज्ञान गगा का शीतल चदन भवातापहारी।
निज स्वभाव की शक्ति प्रगट कर हो जाऊँगा अविकारी॥
सैतालीस शक्तियाँ अद्भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर मे जागा है पाऊँगा मै निजपदराज॥२॥

ॐ ह्रीं अनतानत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो ससारताप विनाश नाय चंदनम् नि.।

पल पल कर यह आयु गल रही तिल तिल कर यह देह विशाल।
केवल तेरी अचल आत्मा सिद्ध समान सदैव त्रिकाल॥

निज अनुभव के अनुपम अक्षत भव, समुद्र शोषित करते।
अक्षय पद की प्राप्ति कराते सर्व विभाव भाव हरते॥
सैंतालीस शक्तियाँ अद्‌भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर में जागा है पाऊँगा मैं निजपदराज॥३॥

ॐ ह्री अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो अक्षय पद प्राप्ताय अक्षत नि.।

सहज ज्ञान उपवन में आकर पाउँगा मैं ज्ञान सुमन।
काम बाण विध्वंस करूंगा निर्मल होगा अंर्तमन॥
सैंतालीस शक्तियाँ अद्‌भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर मे जागा है पाऊँगा मैं निजपदराज॥४॥

ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो काम बाण विध्वसनाय पुष्पं नि.।

सहज ज्ञान नेवैद्य तृप्ति मय अतुल शक्ति प्रगटाते हैं।
क्षुधावेदना को विनाश कर सहज स्वभाव सजाते है।
सैंतालीस शक्तियाँ अद्‌भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर में जागा है पाऊँगा मै निजपदराज॥५॥

ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यंम् नि.।

सहजज्ञान के दीप अनूठे जगा मोह भ्रम तम हर लूँ।
लोकालोक ज्ञान में युगपत झलके ऐसा श्रमकरलूँ॥
सैतालीस शक्तियाँ अद्‌भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर में जागा है पाऊँगा मैं निजपदराज॥६॥

ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिंशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो मोहअंधकार विनाशनायदीपम् नि.।

सहज ज्ञान की धर्ममयी पावन पाऊँगा निज ध्रुव धूप।
नित्य निरंजनपद पाऊँगा निरखूँगा निज आत्म स्वरूप॥

हिंसात्मिक पापों से विरहित छेदो पस्थापन चारित्र।
यह है शुद्ध मोक्ष का कारण पंचम गति दाता सुपवित्र॥

सैंतालीस शक्तियाँ अद्भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर में जागा है पाऊँगा मैं निजपदराज॥७॥
ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिंशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो अष्ट कर्म दहनाय धूपं नि.।

सहज ज्ञान तरुफल अपूर्व ले महामोक्ष फल पाऊँगा।
सादिअनंत सौख्य पाने को सिद्ध शिलापर जाऊँगा॥
सैंतालीस शक्तियाँ अद्भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर में जागा है पाऊँगा मैं निजपदराज॥८॥
ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिंशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

सहजज्ञान के अर्घ्य बनाऊँगा मैं निज स्वभाव भज कर।
पद अनर्घ्य स्वयमेव प्राप्त होगा सारे भव बंधनहर।
कर्म शक्ति को छिन्न-भिन्न करने का जागा उर में भाव।
जो विभाव के बादल छाये कर डालू मैं पूर्ण अभाव॥
सैंतालीस शक्तियाँ अद्भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर में जागा है पाऊँगा मैं निजपदराज॥९॥
ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिंशत् शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं अनर्घ्यपद प्राप्तये नि.।

जयमाला

सोरठा-शक्ति अनंतानंत प्रगट करूँ निज शक्ति से।
पूजन करूँ महान शीघ्र आत्म वैभव मिले॥

वीरछंद

शक्ति अनंतों से भूषित प्रभु सभी जीव हैं सिद्ध समान।
शक्ति प्रगट करने में बाधक एक मात्र निज का अज्ञान॥१॥

रागादिक के सर्व विकल्पों से विरहित होती है शुद्धि।
मुनि विहार के समय जीवरक्षा चारित परिहार विशुद्धि॥

जब स्वरूप से परिचय होता तब होता है निज का भान।
पा लेते ध्रुव धाम शाश्वत नित्य निरंजन पद निर्वाण॥२॥

ध्रुव जीवत्व आदि शक्ति की जिनको अभी नही पहचान।
पर से ही संबंध कर रहे भ्रमित मोह वश निपट अजान॥३॥

स्वर्गादिक के मोह जाल में फंसे भूल अपना कल्याण।
नर्क निगोदादिक दुख पाले कभी न मिलता दुख से त्राण॥४॥

एकमात्र निज समय सार वैभव का यदि ये कर लें ज्ञान।
तो फिर ये अंत मुहूर्त में होंगे वीतराग भगवान॥५॥

पुण्य भाव में धर्म मानकर करते रागों का अहवान।
जड़ आस्रव से राग बढ़ाकर कर्म बंध करते मतिमान॥६॥

कुन्दकुन्द जैसे ऋषि हारे इन्हें कौन समझाए ज्ञान।
एक अरूपी दर्शन ज्ञानमयी ध्रुव निज वस्तुत्व महान॥७॥

इसीलिए मैं शक्ति अनंतों की महिमा लूँ अब तो जान।
सिद्ध स्वपद प्रगटाऊँगा मैं कर सारा भव दुख अवसान॥८॥

सब सिद्धों को वंदन करके अरहंतो को करूँ प्रणाम।
शक्ति अनंत प्रगट कर अपनी पाऊँगा मैं निज ध्रुव धाम॥९॥

सैंतालीस शक्तियाँ अद्भुत प्रगट करूँगा हे जिनराज।
विमल भाव उर में जागा है पाऊँगा मैं निजपदराज॥१०॥

ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति समन्वित सप्त चत्वारिंशत शक्ति मंडित श्री सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

दोहा-निजस्वरूप की शक्तियाँ मुझमें भरीं महान।
शक्तिव्यक्ति करके प्रभो पाऊं पद निर्वाण॥

पुष्पांजलिंक्षिपामि

मिथ्याभ्रम तज सम्यक्दर्शन की जब होती पूरी शुद्धि।
यही स्वरूपाचरण चरित है हो जाती है निर्मल बुद्धि॥

छंद-तारिका

उपयोगमय हूँ चैतन मेरा नाम है।
ज्ञाता दृष्टा शक्तिमयी मेरा ध्रुवधाम है॥
मुझ मे अनतानत शक्तियॉ विमल।
किन्तु पर भाव से बना हूँ दुर्बल।
मैं बना हूँ दुर्बल॥

एक बार आत्माकी शक्ति यदि जान लूँ।
स्व पर विवेक द्वारा शुध्द भेद ज्ञान लूँ।
सिद्ध पद मेरा सिद्ध पुरी में अचल।
त्रिभुवन पति पूर्ण सिद्ध हूँ सबल॥
मै तो सिद्ध हूं सबल॥

अनादि हूँ अनत हूँ अभेद हू अखण्ड।
शक्तियो का पुज ज्ञान सूर्य हूँ प्रचंड॥
मेरा शुद्ध भाव है परम उज्जवल।
अतरंग सिधु मे भरा हैं ज्ञान जल॥
हा भरा है ज्ञान जल॥

मोह् भाव जीता एक क्षण भर में।
आत्मा का भान किया पल भर में॥
शुद्धि की ही वृद्धि हुई मुझमें प्रबल।
अमल बना हूँ मैं रहा नहीं समल॥
मैं रहा नहीं समल॥

❃ ❃ ❃

सूक्ष्म लोभ जब गल जाता है होता अतिसूक्ष्म उपयोग।
यही सूक्ष्म सांपराय चारित है यही मोक्ष सुख जैसा भोग॥

१

आत्म द्रव्य हेतु भूत चैतन्य मात्र भाव धारण लक्षणा प्रथमा-जीवत्व शक्तिः

सोरठा—भाव प्राण चैतन्य लक्षण है इस जीव का।
यही शक्ति जीवत्त्व सदा उछलती ज्ञान में॥

वीरछंद

एकमात्र जीवत्व शक्ति ही चेतन को रखती जीवंत।
मोहराग विभ्रम के कारण जो भूला निज पद भगवंत॥
अस्तित्वादि छहों गुण धारी सकल द्रव्य हैं इस जग में।
अस्तित्त्वादिक गुण स्वजीव को ले आते है शिव मग में॥१॥

स्वतः सिद्ध है गुणमय क्रिया सदा करता है ज्ञान मयी।
निज जीवत्त्व शक्ति के बल से है सदैव कल्याणमयी॥
इन्द्रिय ज्ञान लुब्ध प्राणी को स्वाद अतीन्द्रिय सुख दुर्लभ।
अनुभव रस की जड़ी बूटियों से होता है सहज सुलभ॥२॥

स्वानुभूति की प्राप्ति हेतु जो शुद्ध स्वानुभव करता है।
वह जीवत शक्ति प्रगटा कर सर्व कर्म मल हरता है॥
शुद्ध स्व सत्ता अवलंबन से जो निजानुभव कर लेगा।
निज स्वरूप का आराधक बन शिवपुर मे पगधरलेगा॥३॥

सैंतालीस नयो के द्वारा वस्तु तत्त्व का ज्ञान करूँ।
नयातीत होने का ही प्रभु मैं पुरुषार्थ महान करूँ॥
दर्पण वत त्रैलोक्य झलकता युगपत गुण पयार्य सहित।
फिर भी निजानंद रस पीते रहते हो पर भाव रहित॥

जीव अजीव आदि द्रव्य के ज्ञाता महावीर भगवान।
शत इन्द्रों से वंदित स्वामी आदि जिनेश्वर महा महान॥४॥

पापी जीव नरक जाते है पुण्यी जीव स्वर्ग जाते।
धर्मी जीव शुभाशुभ विरहित हो अपवर्ग मोक्ष पाते॥ .

निज स्वरूप मर्यादित रहकर निज स्वभाव रस पीता है।
ध्रुव जीवंत शक्ति के बल से शाश्वत जीवंन जीता है॥
अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानंत शक्ति संम्पन्न सभी को करूँ प्रणाम॥

सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटत करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
ध्रुव जीवत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं जीवत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-सहज शक्ति जीवत्व से मैं सदैव जीवंत।
एक चेतना प्राण से मै हूँ महिमावंत॥

◆◆◆

२
अजड़त्वात्मिका
द्वितीया-चिति शक्तिः

सोरठा- चेतनत्व अजड़त्व, है स्वरूप चिति शक्ति का।
यह दश प्राण विहीन विद्यमान है सर्वदा॥

वीरछंद

चेतत्व अजड़त्व स्वरूपी है चिति शक्ति अटूट ललाम।
अविनाभावी एक मात्र आनंदी शाश्वत मय ध्रुव धाम॥
जड़स्वरूप पुदगल से भिन्न सदैव हमारी है चिति शक्ति।
जितने सिद्ध हुए हैं अब तक सबने की है निज की भक्ति॥१॥

चेतत्व अनुजीवी गुण है प्रतिजीवी अजड़त्व प्रसिद्ध।
इसी शक्ति के कारण चेतन चेतन रहता शाश्वत सिद्ध॥
परविकार पर्याय किसी के आश्रित है चिति शक्ति नहीं।
शक्ति पुंज चैतन्य तत्व में अणुभर मात्र अशक्ति नहीं॥२॥

जो स्व भाव से सहज शुद्ध चारों कषाय से रहित विशुद्ध।
यथाख्यात चारित्र यही है सहजानंदी निर्मल शुद्ध॥

विद्यमान है निज स्वभाव में सामग्री अखंड अविरुद्ध।
है अभेद सत्ता चेतन की उपरम भावों से अति शुद्ध॥
है चैतन्य धातु में व्यापक गुण अनंत त्रैकलिक ध्रौव्य।
सत्ता निज चैतन्य राज की देती परम मोक्षमय सौख्य॥३॥

चेतन द्रव्य बताने वाली भाव स्वरूप शक्ति चिन्मय।
जो अखंड आत्मा का आश्रय लेता होता शिव सुखमय॥
पुण्य उदय से धन आता है किन्तु आत्मा को क्या लाभ।
पाप उदय से धन जाता है किन्तु आत्म को कहाँ अलाभ॥४॥

परसे पृथक्करण करके जो अपने घर में रहता है।
शुद्ध ज्ञान गंगा के भीतर ज्ञान भाव से बहता है॥
आत्मा में चिति शक्ति पूर्ण है विद्यमान आनंद अपार।
शून्य अवस्था का अभाव है केवल ज्ञान सहज विस्तार॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
चेतनत्व चिति शक्ति सहज से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं चिति शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-चेतन की चिति शक्ति का चेतनत्व है नाम।
सदा सदा अजड़त्व है परम पूज्य निष्काम॥

◆◆◆

कोटि कोटि चर्चाओ का है एक सार सम्यक्दर्शन।
लाखो शास्त्र पढ़ो सबकी ध्वनि है उत्तम आतमदर्शन॥

३
अनाकारोपयोगमयी
तृतीया-दृशि शक्ति:

सोरठा— *अनाकार उपयोग दर्शन क्रिया स्वरूप है।*
ऐसी है दृशि शक्ति सत्ता मे उपयुक्त है॥

वीरछंद

दो चैतन्य चक्षु है जिसके ऐसा मै चैतन्य निधान।
मै केवल चिद्रूप शुद्ध हूं मेरा तो है मुक्ति विहान॥
एक चक्षु है दर्शन रूपी एक चक्षु है ज्ञान स्वरूप।
ज्ञाता दृष्टा निज स्वभाव ही त्रिभुवन मे सर्वोच्च अनूप॥१॥

है दर्शन उपयोग सूक्ष्म पर पकड़ नही पाता है हाथ।
मात्र जान सकता है पूरा ऐसा है त्रिभुवन का नाथ॥
धर्म निमित्तो मे न मिलेगा उपादान मे मिलता है।
है निमित्त तो पूर्ण नपुसक अनायास ही झिलता है॥२॥

सत् स्वभाव आश्रय कर्त्ता को राग नही होता उत्पन्न।
इसी त्याग को धर्म कहा जाता है निज वैभव सपन्न॥
सब द्रव्यो की सत्ता सत है गुण अभेद हैं ध्रुव धामी।
धर्म अधर्म काल नभ पुद्गल से है भिन्न श्रेष्ठ नामी॥३॥

समावेश कर लेता लोकालोक यही दर्शन उपयोग।
निज कल्याण क्षेत्र है निज मे जिसका होता नही वियोग॥
असख्यात औदारिक तन मे हैं प्रत्येक शरीर अनंत।
भिन्न-भिन्न है सब स्वतत्र है गुण समुद्र हैं महिमावत॥४॥

अनाकार उपयोग मयी है दर्शन शक्ति शक्तिशाली।
सूक्ष्म सदा उपयोग आत्मा का सदैव वैभव शाली॥

छः द्रव्यों में अपना आत्म द्रव्य ही सब से श्रेष्ठ महान।
नव पदार्थ में अपना आत्म पदार्थ श्रेष्ठ कल्याण प्रधान॥

यह मैं यह पर भेद नहीं है यह अभेद महिमा वाली।
समभावों की ही दृष्टा है श्रद्धा ज्ञान सौख्य लाली॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुवयाम।
दर्शनमय दृशि शक्ति सहज से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं दृशि शक्ति मंडित श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-दर्शनमय दृशि शक्ति से भरा हुआ आपूर्ण।
इसी शक्ति की व्यक्ति से हुआ अदर्शन चूर्ण॥

◆◆◆

४
साकारोपयोगमयी
चतुर्थी-ज्ञान शक्तिः

सोरठा—*ज्ञानशक्ति साकार, है उपयोग मयी सदा।*
ज्ञेयों के आकार स्वतः झलकते ज्ञान में॥

छंद- ताटंक

ज्ञान शक्ति की अद्भुत महिमा केवल ज्ञान जानता है।
जब तक है अज्ञान तभी तक प्राणी नहीं मानता है॥
तीर्थंकर का वास सदा ज्ञानी के उर में रहता है।
स्वतः तीर्थपति ज्ञान स्वरूपी ज्ञान धार में बहता है॥१॥

चिदानंद चिन्मय चेतन के चित् स्वभाव को ही जानो।
मात्र ज्ञान लक्षण से निज चैतन्य मूर्ति को पहचानो॥

तन से तू तादाम्य न बन अब निज से ही तादात्म्य बना।
ज्ञान ज्योति से तिरस्कार आस्रव का कर पा सौख्यघना॥

तीर्थों मे भी ज्ञान नही है इतना तो कर सम्यक् बोध॥
निज स्वभाव पर पूर्ण दृष्टि दे अतर मे कर तत्क्षण शोध॥२॥

शक्ति अनतो के रत्नो का अमित सग्रहालय है परिपूर्ण।
फिर भी शक्तिहीन बनता है जबकि शक्तियो से है पूर्ण॥
दर्शन ज्ञान स्वभावी चेतन ध्रुव सत्ता से जुडा हुआ।
पर सत्ता से पर भावो से है सदैव ही मुडा हुआ॥३॥

सम्यक् ज्ञान अखड सर्वव्यापी की शक्ति निराली है।
दृढ सम्यक् चारित्र शक्ति ही शिव सुख देने वाली है॥
ज्ञान स्वरूप आत्मा ही है अनेकान्त की मूर्त्ति प्रसिद्ध।
है सम्यक् एकान्त शक्ति ही परम पूज्य पावन शिवसिद्ध॥४॥

ज्ञान शक्ति से ज्ञानी अपने निज स्वभाव मे ही तल्लीन।
सवर रूपी शस्त्र ग्रहण कर करता आस्रव बध प्रक्षीण॥
शास्त्र विशुद्ध ज्ञान का साधन हो सकता है नही त्रिकाल।
ज्ञान स्वय से ही होता है ज्ञान भाव जीवत विशाल॥५॥

अरहतो सर्वज्ञो को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
स्वपर प्रकाशक ज्ञानशक्ति से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥
ॐ ही ज्ञानशक्ति मडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि।

दोहा-सकल ज्ञेय ज्ञाता सहज ज्ञान शक्ति भरपूर।
है त्रिकाल अज्ञान से लाखो योजन दूर॥

❋ ❋ ❋

५
अनाकुलत्व लक्षणा
पंचमी-सुखशक्तिः

सोरठा-आकुलता से शून्य, विद्यमान सुख शक्ति है।
मात्र अनाकुलरूप, लक्षण जगत प्रसिद्ध है॥

वीरछंद

मात्रअनाकुलता लक्षण है ऐसी है सुख शक्ति प्रचंड।
शुभ या अशुभ वृत्ति से विरहित निजानंद रसमयी अखंड॥
दुख स्वभाव तो नहीं आत्मा का यह सौख्य स्वभावी है।
गुणअनंत का यह समुद्र है पर का सदा अभावी है॥१॥

द्रव्य स्वगुण पर्यायों तीनों में ही है निज सुख गुण व्याप्त।
दर्शन ज्ञान चरित्र आदि सब यह अभेद है निर्मल आप्त॥
आत्मा के गुण में है राग अभाव सदैव अनाकुल है।
शक्ति त्रिकाली का सौन्दर्य सुशोभित कभी न व्याकुल है॥२॥

मस्तक का बोझा कांधे पर रखने जैसा है शुभभाव।
तन का भार न कम होता ज्यों पूर्ण हेय है सर्व विभाव॥
प्रतिक्रमण विषकुम्भ जानकर निजस्वभाव में ही रम जा।
निज चैतन्य पिंड के सन्मुख शुद्ध भावना से जम जा॥३॥

अमित निराकुल आल्हाद का वेदनही शाश्वत सुख मय।
अपरम भावों का वेदन तो एक मात्र चहुँ गति दुखमय॥
जिन आज्ञा में चलने वाले जीव मोक्ष सुख पाते हैं।
जिन आज्ञा विपरीत जीव भवसागर के दुख पाते हैं॥४॥

मूढ़ जीव ऐसा विचारते करें धर्म में परिवर्तन।
धर्म नहीं परिवर्तित होता ऐसा दृढ़ सम्यक् दर्शन॥

राग व्याधि सम व्याधि नहीं है निज समाधि सम नहीं समाधि।
पर विभव सारे कुतीर्थ है भव सागर की दुख मय व्याधि॥

जिन आज्ञा में अगर रहोगे तो आनंद उठाओगे।
मोक्षमार्ग पर चलते-चलते स्वयं सिद्ध बन जाओगे॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
शाश्वत निजसुखशक्ति प्रकट कर पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं सुखशक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-निज सुख शक्ति विशाल है सहज निराकुलरूप।
पूर्ण अनत सदा सुखी है चेतन चिद्रूप॥

❋ ❋ ❋

६
स्वरूपनिर्वर्तन सामर्थ्य रूपा
षष्ठी— वीर्य शक्तिः

सोरठा—रचने में सामर्थ्य, रचना-आत्म स्वरूप की।
वीर्य शक्ति है पास, यही अतुल बल की धनी॥

छंद - ताटंक

निज स्वरूप को रचने में है वीर्य शक्ति सामर्थ्य मयी।
द्रव्य तथा गुण पर्यायों में विद्यमान है विश्व जयी॥
आत्मा का अस्तित्व अनादि अनंत अपूर्व शाश्वत है।
आत्मा में संसार नहीं है पर भावों का घातक है॥१॥

आत्मबीन का नाद मधुर सुन भव कंटक क्षय करता है।
आत्मवीर्य का तेज स्वयं जाग्रत हो भव दुख हरता है॥
वीर्य शक्ति तो है त्रिकाल तेरे भीतर अब परिचय कर।
निज पुरुषार्थ शक्ति के द्वारा निज बल का दृढ़ निश्चय कर॥२॥

कलह न करना किसी जीव से ना तुम करना वाद विवाद।
कलह विहीन तुम्हारा पद है तुम्हीं सिद्ध प्रभु हो अविवाद॥

बाह्य वस्तु के ग्रहण त्याग से रहित समर्थ शक्ति सपन्न।
व्यय उत्पाद ध्रौव्य से भूषित निर्मल निकट भव्य आसन्न॥
निज स्वभाव सामर्थ्य गुणमयी फिर भी तू करता है भूल।
निज स्वभाव को लक्ष्य बना जो वीतरागता का है मूल॥३॥

अविनाभावी निमित्त नैमित्तिक का है सबंध प्रसिद्ध।
मात्र स्वसन्मुख होने पर ही होता जीव शाश्वत सिद्ध॥
तीन काल के तीर्थंकर अरहंतों सिद्धों को जानूं।
गुण अनत के धारी उन सम अपनी महिमा पहचानूं॥४॥

कर्मभाव, स्वभाव, नियति, पुरुषार्थ, काल पाँचो समवाय।
निज स्वभाव सामर्थ्य रचाले यही मार्ग है शिव सुखदाय॥
आत्मा की सामर्थ्य जानने से चैतन्य शक्ति मिलती।
जो चैतन्याकार निराकुल उसकी महिमा उर झिलती॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
वीर्य शक्ति सामर्थ्य प्रगट कर पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥
ॐ ह्री वीर्यशक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—विद्यमान है आत्म में वीर्य शक्ति सुविशाल।
रचना रचती आपकी अमित अडोल त्रिकाल॥

* * *

मोह राग रुष के वितान को निज भावों से करो विनष्ट।
वीतराग भावों में रहकर कर्म बंध सब कर दो नष्ट॥

७

अखंडित प्रताप स्वातन्त्र्य शालित्व लक्षणा

सप्तमी—प्रभुत्वशक्तिः

सोरठा—अतुल अखंड प्रताप, खंडित होता ही नहीं।
शक्ति प्रभुत्व अटूट, लक्षण है इस जीव का॥

छंद-ताटंक

मगल सुप्रभात की बेला ही प्रभुत्व निज दर्शाती।
शुद्ध अखंड प्रताप आत्मा का सदैव ध्रुव बतलाती॥
धर्मी जीव सदा होता है निज प्रभुता को पा संपन्न।
पूर्ण अनादि अनंत शाश्वत गुण भंडारी नहीं विपन्न॥१॥

पुण्य पाप की क्षणिक वृत्ति से खडित होता नहीं प्रताप।
यदि निर्मल पर्याय जगे तो मिल जाता है महा प्रभात॥
है निजात्म के सर्व प्रदेशो मे प्रभुत्व गुण पूरा व्याप्त।
सम्यक् श्रद्धा के द्वारा यह होता है अर्हत् शिव आप्त॥२॥

जब तक दीन रहेगा तब तक मुक्ति असंभव ही तू जान।
एक प्रभुत्व शक्ति के द्वारा हो सकता है महिमावान॥
मंदिर मे परमेश्वर या भगवान नही प्रभु रहते हैं।
जो स्वभाव आश्रित होते हैं वे ही प्रभु वन रहते हैं॥३॥

अपने कारण धर्म लाभ होता है सदा आत्मा को।
पर की रुचि से कर्म बंध होता है सदा आत्मा को॥
पामर जीव निमित्त राग से माँग रहा प्रभुता की भीख।
है प्रभुत्व संपन्न सदा ही भूल गया जिन पद की सीख॥४॥

पर द्रव्यों पर क्षेत्र तथा परकाल तथा पर भावों से।
आत्मा का संबंध नहीं है फिर भी जुड़ा विभावों से॥

पंचम गति पाने का एक उपाय दृष्टि में आता है।
चारों गति की पीड़ा हरने में सक्षम ध्रुव ज्ञाता है॥

एक शक्ति के वर्णन में है समयसार का ही भंडार।
शक्ति अंनतों के वर्णन में शुद्ध आत्मा ही आधार॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
परम प्रभुत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं प्रभुत्वशक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—शक्ति प्रभुत्व महान है सब जीवों के पास।
त्रिभुवन पति स्वयंमेव है निज में सदा निवास॥

❋ ❋ ❋

८

सर्वभाव व्यापकैक भावरूपा
अष्टमी—विभुत्व शक्तिः

सोरठा— *भावरूप है एक, व्यापक सबही भाव में।*
शक्ति विभुत्व प्रसिद्ध, पराधीन किंचित नहीं॥

छंद - ताटंक

दीनहीनता से विरहित है शक्ति विभुत्व आत्मा की।
विभुता से परिपूर्ण सदा ही शिवमय ऋतु परमात्मा की॥
गुण चैतन्य विभुत्व शक्ति की श्रद्धा ही सम्यक् दर्शन।
यही ज्ञान चारित्र पूर्णतः केवल ज्ञान विभूषित धन॥१॥

क्षणिक राग को क्षय करके तू विभुतावान आत्मादेख।
इसके एक इशारे पर तू निज शुद्धात्म तत्व को लेख॥
गुण अनंत पति होने पर भी करता नहीं राग को नष्ट।
फिर विभुत्व निज शक्ति कहाँ से प्रगटित होगी अतिउत्कृष्ट॥२॥

देह जर्जरित हो जाते ही तजकर उड़ जाता है जीव।
इसी देह से अगर काम ले तो हो जाए शुद्ध सदीव॥

अंतर्दृष्टि पूर्वक जब जब होता अंतरोन्मुख जीव।
तब तब निज विभुत्व प्रगटा कर करता है आनंद सदीव॥
निज अस्तित्व मुख्य करके तू तोड़ सकल जग का व्यवहार।
निजावलंबन द्वारा होगा एक समय में भवदधिपार॥३॥

राग आत्मा में न व्याप्त है नहीं राग में आत्मा व्याप्त।
एक समय पर्यंत विकारी पर्यय होती गुण से व्याप्त॥
यदि स्वीकार विभुत्व शक्ति का हो जाए तो हो आनंद।
निज चैतन्य महल में मिलता है चेतन को परमानंद॥४॥

आत्मा की विभुता का अद्भुत कथन हृदय को भाता है।
पंचलब्धियाँ प्रगटित होती समकित रवि दर्शाता है॥
ध्रुव स्वभाव अभिनंदन होता आते पाँचों ही समवाय।
एक अखंड प्रताप वंत ध्रुव आत्म स्वरूप से मोक्ष सुखदाय॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
महा विभुत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं विभुत्वशक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—व्यापक है सब भाव मे शक्ति विभुत्व महान।
तीनों काल स्वतंत्र है पराधीन मत जान॥

❋ ❋ ❋

जग के धंधों में फंसकर ही अपना अकल्याण मत कर।
शुद्ध आत्मा की सुधि ले ले अब तो तू प्रमाद मत कर॥

९
विश्व-विश्व सामान्य भाव परिणामात्म दर्शनमयी नवमी—सर्वदर्शित्व शक्तिः

सोरठा—सकल विश्व सामान्य, दृष्टित होता है सहज।
शक्ति सर्वदर्शित्व, शुद्ध आत्म दर्शनमयी॥

छंद-ताटंक

मात्र सर्वदर्शित्व शक्ति ही पूर्ण आत्म दर्शन मय है।
है अनंत बल से संपन्न सदैव शाश्वत शिवमय है॥
लोकालोक देखने का सामर्थ्य पूर्ण तेरे भीतर।
शक्ति सर्वदर्शित्व जीव की अति सामर्थ्य वान शिव कर॥१॥

महाविदेह क्षेत्र उत्तम है भरत क्षेत्र उत्तम न कहीं।
ऐसी भ्रमित मान्यता तेरी भव सागर की कष्ट मही॥
तीर्थंकर की वाणी से भी लाभ न होने पायेगा।
निज स्वरूप की मूर्ति निरख ले पूर्ण सिद्ध बन जाएगा॥२॥

शुद्ध आत्मा का दर्शन तो तन देवालय में होगा।
जिस पुण्य की रुचि होगी उसको तो धर्म नहीं होगा॥
गुण अनंत मय द्रव्य सदा संपूर्ण दृष्टि गोचर होता।
जब निज का आश्रय लेता है अनुभव गम्य मधुर होता॥३॥

सदा पूर्णता से परिपूर्ण आत्मा भव्य सर्वदर्शी।
निर्मल ज्ञान निधान आत्मा पर भावों से अस्पर्शी॥
यही सर्वदर्शित्व शक्ति है पूर्णज्ञान सागर स्वयमेव।
है ज्ञातृत्व अलंकृत निज वैभव अपार शाश्वत अतएव॥४॥

वस्तुतत्व के जब दर्शन करता है तो पाता विश्राम।
मात्र प्रयोजन भूत आत्मा पर ही दृष्टि सतत अविराम॥

केवल शास्त्र पठन पाठन से निज चैतन्य न जागेगा।
जड़ जैसा जड़ रहकर ही तू भव से कभी न भागेगा॥

जैसी अरिहंतो सिद्धों की श्रद्धा है निष्कंप अडोल।
उसी भांति छदमस्थों की श्रद्धा भी लेश न डाँवाडोल॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञो को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
शक्ति सर्वदर्शित्व स्वबल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं सर्वदर्शित्वशक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—शक्ति सर्वदर्शित्व ही दर्शन मयी प्रसिद्ध।
अखिल विश्व को देखती लेश न पर से विद्ध॥

❋ ❋ ❋

१०

विश्व विश्व विशेष भाव परिणामात्म ज्ञानमयी
दशमी—सर्वज्ञत्व शक्तिः

सोरठा—सर्वद्रव्य पर्याय, गुण त्रिकालसब जानती।
सर्वज्ञत्व स्वशक्ति, आत्म ज्ञान मय पूर्ण है॥

छंद-ताटंक

सर्वज्ञत्व शक्ति का स्वामी लोकालोक जानता है।
सकल द्रव्य गुण पर्यायों को युगपत यह पिछानता है॥
जड़ की क्रिया स्वजड़ में चेतन की चेतन में ही होती।
सर्वज्ञत्व भावना पूरा ही अज्ञान भाव खोती॥१॥

सर्वज्ञत्व दशा होती है प्रगट आत्मा के द्वारा।
क्षय एकत्व स्वपर का करती कह जाती है भवकारा॥
मैं पर का कुछ करूँ भावना खोटी को तू कर दे चूर।
मात्र सदा ज्ञाता रह करतू निज भावों से हो भरपूर॥२॥

तन मन वाणी परांधीनता के प्रतीक है निश्चय ज्ञान।
इनसे मोह भाव तज दे तू तब होगा तेरा कल्याण॥

प्रथक प्रथक हैं सभी वस्तुऐं निजनिज मैं है सब स्वाधीन।
है स्वतंत्र सत्ता द्रव्यों की कोई कभी न पर आधीन॥
तन देवालय मे ही तो सर्वज्ञ विराजे हैं कर ज्ञान।
पत्थर निर्मित देवालय मे कभी नहीं मिलते भगवान॥३॥

इस त्रिकाल सर्वज्ञ शक्ति का सच्चे मन से कर आदर।
तू सर्वज्ञ बनेगा निश्चिय तू सर्वज्ञ शक्ति का घर॥
सर्वज्ञत्व शक्ति से विचलित होने का मत करतू यत्न॥
एक मात्र उत्तम उपाय है सर्वज्ञत्व करो उत्पन्न॥४॥

षटकारक से सदा परिणमित होते हैं सदैव सब द्रव्य।
परकारकसे कभी परिणमित होता कभी न कोई द्रव्य॥
आत्मा ही सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान शरीरी शुद्ध त्रिकाल।
त्रिविध कर्म मल से विहीन है गुण अनत मय महाविशाल॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
सर्वज्ञत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्री सर्वज्ञत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-युगपत सबको जानती यही शक्ति सर्वज्ञ।
निश्चय से तो सर्वदा निजस्वभाव आत्मज्ञ॥

❋ ❋ ❋

इन्द्र तथा अहमिन्द्र आदि सब शरण नहीं है इस जग में॥
शुद्ध आत्मा परम शरण है इसको ही ले शिवमग में॥

११

नोरूपात्म प्रदेश प्रकाशमान लोकालोकाकार मेचकोपयोग लक्षणा

एकादशमी-स्वच्छत्व शक्तिः

सोरठा—लोकालोकाकाश, से मेचक लक्षण प्रगट।
सब का पूर्ण प्रकाश, है स्वच्छत्व स्व शक्ति से॥

छंद-ताटंक

यह स्वच्छत्व शक्ति बाहुयान्तर मन को निर्मल करती है।
आस्रव और बंध के सारे दोष पूर्णतः हरती है॥
दर्पण वत् यह स्व पर प्रकाशक निज पर जान रहा प्रत्यक्ष।
जग का कोलाहल तज देता निज स्वभाव के हुआ समक्ष॥१॥

लोकालोक ज्ञान में आता सकल ज्ञेय का ज्ञानी है।
है स्वच्छत्व शक्ति से भूषित वीतराग विज्ञानी है॥
ज्ञान राग से सदा रहित है निज स्वच्छत्व स्व गुणधारी।
एकनित्य अविकल स्वरूप में अविचल होता अविकारी॥२॥

व्यय उत्पाद सहित ध्रुव चेतन गुण अनंत मय श्रेष्ठ विशाल।
वर्त्तमान पर्याय दोषमय भावी शुद्ध स्वरूप त्रिकाल॥
नहीं मलिनता पल भर को भी किंचित मात्र कभी इसमें।
सहज स्वच्छता की प्रतीक है ज्ञान स्वरूप सभी इसमें॥३॥

आत्मप्रदेश अमूर्तिक जिसमें मूर्त अमूर्त झलकते हैं।
चेतन के परिणाम सदा ही निज की ओर ललकते हैं॥
निज प्रभु के दर्शन की उत्तम रीति विश्व में है विख्यात।
ज्ञान विकास शक्ति के द्वारा निज प्रभु से होगा साक्षात्॥४॥

अणु भर भी स्वच्छत्व शक्ति में किंचित मात्र विकार नहीं।
जब उपयोग शुद्ध होता है अस्वच्छत्व आधार नहीं॥

कर्म विपाकोदय निमित्त पा होते राग द्वेष विभाव।
अज्ञानी उन में रत होता भूल वीतरागी निजभाव॥

प्रगट अनंत चतुष्टय होते होती शिव सुख रसकी पूर्ति।
सर्वकर्म रज धुल जाती है होती उज्ज्वल निज शिव मूर्ति॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञो को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
स्वच्छत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥
ॐ ह्री स्वच्छत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—शुद्ध शक्ति स्वच्छत्व है दर्पणवत अमलान।
बाह्यान्तर निर्मल दशा प्रगटाती गुणमान॥

❋ ❋ ❋

१२
स्वयम् प्रकाशमान विशद स्व संवित्तिमयी
द्वादशमी-प्रकाश शक्तिः

सोरठा—है प्रकाश शिव शक्ति, स्वयं स्व संवेदन विशद।
सदा स्वानुभव रूप स्वतः प्रकाशित है सदा॥

वीरछंद

शक्ति प्रकाश प्रगट करने पर हो जाएगा तू भगवान।
निजानंद रस केन्द्र ज्ञान का पुंज परम पावन गुणवान॥
आत्म प्रकाश पूर्ण शाश्वत है ज्ञान प्रकाश परम पावन।
इसके भीतर लहराता हरियाला मन भावन सावन॥१॥

समता रसकी झड़ियाँ लगती समभावी धारा बहती।
ज्ञान तरंग जीव के भीतर चिन्मय संग किलोल करती॥
ज्ञानमयी मलयज चंदन चर्चित होता रहता स्वयमेव।
ज्ञानवृक्ष के गुण अनंत मय पुष्प बिखरते हैं अतएव॥२॥

"वंदित्तु सव्व सिद्धे" की ध्वनि जब अंतरंग में आती है।
नमः समयसाराय गूँज चारों दिशि में छा जाती है॥

समकित की फुलबगिया अनुपम सुरभि जगाती आंगन में।
परम दिव्य पूर्णिमा प्रकाशित होती निज के प्रांगण में॥
ज्ञान सूर्य किरणावलि का आलोक पूर्ण दृष्टित होता।
सिद्धशिलापर चेतन प्रभु का सिंहासन निश्चित होता॥३॥

ज्ञान समर्पयामि स्वाहा कहते ही होता परमानंद।
प्रकाशत्व स्वच्छत्व शक्तियों से भूषित निज सहजानंद॥
कमल पत्र पर नीर बिन्दु सम सदा पृथक ही रहता है।
उसी भांति निग्रंथ भावमुनि निज गंगा में बहता है॥४॥

अंतर में वैराग्य भावना का छम छम छम छम नर्त्तन॥
बाह्यन्तर चारित्र सहज ही हरता कर्मों के बंधन॥
निज परमात्म स्वरूप ध्यान से परम ब्रह्म बन जाता है।
बना बनाया क्या बन जाता सहज स्वयं को पाता है॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
परम प्रकाश शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं प्रकाश शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—शक्ति प्रकाश अखंड है ज्ञान ज्योति का पुंज।
है विकार इसमें नहीं उज्ज्वल शांत निकुंज॥

❋ ❋ ❋

राग अपेक्षा ज्ञायक भाव कहा जाता है आदरणीय।
द्रव्य अपेक्षा हेय कहा जाता है, कभी न आचरणीय॥

१३

क्षेत्रकालानवच्छिन्न चिद्विलासात्मिका त्रयोदशमी—असंकुचित विकासत्व शक्तिः

सोरठा— क्षेत्रकाल मर्याद, रहित अमर्यादित सदा।
असंकुचित विकास, शक्ति आत्म विलासमय॥

छंद-ताटंक

असंकुचित विकासत्व की शक्ति हृदय में भारी है।
आत्म विकास हो रहा अनुपम चेतन की बलिहारी है।
होता है सकोच बिना ही सहज शक्ति का पूर्ण विकास।
आत्म द्रव्य को एक समय में मिलता सिद्धों का आवास॥१॥

यही अमर्यादित विकास का क्रम है इसको तो पहचान।
ज्ञान चक्षुपा प्रमाद छोड़ो बनो वीतरागी भगवान॥
जो पापों का ओघहरे वह हरि कहलाता है जग में।
जो पुण्यों का ओघ हरे वह ही आता है शिव मग में॥२॥

यह षड्गुणी वृद्धि हानि होती रहती निज के कारण।
ध्रुव स्वरूप ज्यों का त्यों रहता करता निज पौरुष धारण॥
सिद्धशिला पर मुक्त जीव सब प्रथक प्रथक ही रहते हैं।
एक क्षेत्र अवगाही फिर भी भिन्न-भिन्न ही रहते है॥३॥

आत्म शक्ति को पहिचाने बिन आत्म प्रसिद्धि नहीं होती।
आत्म प्रसिद्धि नहीं होती तो कोई सिद्धि नहीं होती॥
जो करता शुद्धात्म तत्व उपलब्ध वही होता भगवान।
शक्ति अनंतानंत प्रगटकर पाता सिद्ध स्वपद निर्वाण॥४॥

है पर्याय बुद्धि के कारण ही इस आत्मा को संकोच।
ध्रुव स्वभाव लक्ष्य में ले तो हो विकास क्षय हो भवमोच॥

यह निर्मल पर्याय आश्रय योग्य न होने से है हेय।
एक मात्र है शुद्ध द्रव्य ही आश्रय योग्य सदैव उपेय॥

पूर्ण स्वभाव शक्ति को धारण करने वाला ध्रुव ज्ञायक॥
असंकुचित अपना विकास कर हो जाता त्रिभुवन नायक॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
असंकुचित विकास शक्ति से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥
ॐ ह्रीं असंकुचित विकास शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—शक्ति विकास असंकुचित करती आत्म विकास।
इसके बल से जीव सब पाते मुक्ति निवास॥

❋ ❋ ❋

१४

अन्या क्रियमाणान्याकारकैकद्रव्यात्मिका
चतुर्दशमी—अकार्य कारण शक्तिः

सोरठा—नहीं अन्य का कार्य, कारण भी ना अन्य का।
शक्ति अकारण कार्य, है स्वद्रव्य अनुरूप ही॥

छंद-ताटंक

कारण कार्य पना न लेश भी पर विकार के संग कभी।
अकार्य कारणत्व शक्ति त्रैकालिक है संपूर्ण सभी॥
कोई द्रव्य किसी का कर्त्ता धर्त्ता भोक्ता कभी नहीं।
सभी द्रव्य अपने भावों में रहते है परवेश नहीं॥१॥

छोड़ निमित्ताधीन दृष्टि तू दृष्टि बना भूतार्थ मयी।
दया दान व्रत भक्ति आदि का कारण आस्रव बंधमयी॥
जो भूतार्थ आश्रित होता हो जाता है सम्यक्दृष्टि।
अभूतार्थ आश्रय लेने वाला रहता है मिथ्यादृष्टि॥२॥

इन्द्रिय सुख अति विषम नाश मय क्षण भंगुर है बंध मयी॥
आत्मोत्पन्न सौख्य ही शाश्वत परम अतीन्द्रिय कर्मजयी॥

अपना कारण कार्य स्वयं है पर का है अकार्य कारण।
अपनी सहज शक्ति के कारण जीव स्वतः भवदधि तारण॥
महापाप मिथ्यात्व पुष्ट करने वाली है बंध कथा।
इसके कारण चारो गतियों में पायी है महाव्यथा॥३॥

जप तप संयम शील आत्मा प्रत्याख्यान यही जानो।
दर्शन ज्ञानमयी निजात्मा स्वपर विवेक सहित मानो॥
मात्र द्रव्य संयम के द्वारा ग्रैवक तक के सुख पाये।
चिर मिथ्यात्व उदय होते ही चारों गति के दुख पाये॥४॥

अगर भाव सयम होता तो पद अरहंत सहज मिलता।
केवल ज्ञान सूर्य का पावन दिव्य प्रकाश हृदय झिलता॥
जब स्वभाव की ओर दृष्टि दी तो पाया निर्मल कल्याण।
निज अस्तित्व जागते ही प्रभु देखी उर मे शक्ति महान॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं त्रसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
अकार्य कारण शक्ति प्रगट कर पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं अकार्य कारणत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—अकार्य कारण शक्ति का प्राणी है भंडार।
पर कारण पर कार्य से भिन्न सदैव उदार॥

❋ ❋ ❋

परमानंद स्वरूप आत्मा का लक्षण त्रैकालिक ध्रुव।
ज्ञान सुधारस का सेवन ही ध्रुव उपाय है राग अध्रुव॥

१५

परात्मनिमित्तक ज्ञेय ज्ञानाकार ग्रहण ग्राहणस्वभाव रूपा पञ्चदशमी—परिणम्य परिणामात्मक शक्ति :

सोरठा—सदा स्वपर का ज्ञेय, तथा स्व पर ज्ञाता सहज।
परिणम्य परिणामात्मक, शक्ति यही लक्षण सदा॥

छंद—ताटंक

परिणम्य परिणामकत्व शक्ति का स्रोत हृदय के भीतर है।
काललब्धि आते ही होता निज स्वरूप का आदर है॥
ज्ञेय जानने का उपाय तज ज्ञातापन का कर पुरुषार्थ।
सकलज्ञेय झलकेगा दर्पण वत् तू साधसहज सत्यार्थ॥१॥

होता है परिणमित द्रव्य क्रमबद्ध स्वय के ही बल से।
ज्ञानाजन का कर प्रयोग बचता है रागो के छल से॥
शुद्ध तत्व के आश्रय से होती है प्रकट शुद्ध पर्याय।
निर्मल आत्म स्वभाव प्रकट हो पाता उत्तम सुख समुदाय॥२॥

सदा अकेला शुद्ध आत्मा तन मन वाणीं से अति भिन्न।
अतरग बहिरग शुद्ध कर इसका ही कर ध्यान अभिन्न॥
निजानद मे झूल झूल आनद अतीन्द्रिय रसपाता।
परिणम्य परिणामात्मक शक्ति पूर्ण हृदय मे प्रगटाता॥३॥

ज्ञानगगन के नक्षत्रो का धवल प्रकाश मनोहर है।
दिव्य चद्रिका नृत्य कर रही छुमक छुमक अति सुन्दर है॥
गीत विभावो के गा गा कर सचमुच मै हैरान हुआ।
गीत स्वभावो के गाने का सचमुच अब अरमान हुआ॥४॥

भेद न समझा था दोनो मे इसीलिए भ्रमता आया।
पलभर को भी शान्ति न पायी सुख का केतु न लहराया॥

मोह कर्म के उदय काल में गुणस्थान जो होते हैं।
मोह कर्म के क्षय होने पर गुणस्थान क्षय होते हैं॥

इस नैराश्य गगन का धुंधलापन कैसे हो दूर प्रभो।
सौख्य अतीन्द्रिय का समुद्र उर में लहराए महा विभो॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
परिणम्य परिणामात्मक शक्ति से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं परिणम्य परिणामात्मक शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—परिणम्य परिणामात्मक शक्ति प्रसिद्ध महान।
स्वपर ज्ञेय को जानती होता क्षय अज्ञान॥

❋ ❋ ❋

१६

अन्यूनातिरिक्त स्वरूप नियतत्व स्वरूपा षोडशमी-त्यागोपादान शून्यत्व शक्तिः

सोरठा—ग्रहण नहीं ना त्याग, घटता बढ़ता भी नहीं।
त्यागोपादान शून्य, शक्ति सर्वथा प्रगट है॥

छंद-ताटंक

त्यागोपादान शून्य शक्ति ज्ञानी जन ही प्रगटाते हैं।
पर्याय बुद्धि के पल भर में सारे विकल्प उड़ जाते हैं॥
स्वसंबंध निश्चल स्वग्राह्य ही तो अनुभव में आता है।
पर के ग्रहण त्याग से विरहित ही शाश्वत सुख पाता है॥१॥

तन मन वाणी पुदगल से चैतन्य मूर्ति को क्या लेना।
यही त्रिकाली द्रव्य पूर्ण पर का भी इसको क्या देना॥
साधक दृष्टि अभेद सदा अपने अखंड पर रहती है।
तब निर्मल पर्याय प्रगट हो अपने बल से बहती है॥२॥

निज में ही रतिवंत बनो तुम निज में ही संतुष्ट रहो।
निज में ही उत्तम सुख पाओ निज में ही तुम तृप्त रहो॥

ज्ञान स्वभाव प्रतीति किए बिन आत्म ज्ञान होता न कभी।
पर के ग्रहण त्याग से विरहित निज स्वभान होता न कभी॥
जब होगी सम्यक् प्रतीति तब सम्यक्दर्शन प्रगटेगा।
चिर संचित मिथ्यात्व मोह भी एक समय मे विघटेगा॥३॥

जो प्ररूपणा मन घडत तत्वों की करते आए हैं।
तीनो ही कालों मे उनने घोर महा दुख पाए है॥
ज्ञानी निरपराध रह करता मोह राग रुष क्षय निःशक।
निज स्वरूप मे रहते रहते मिट जाते सब कर्म कलंक॥४॥

स्वाश्रय के बिन श्रम निष्फल है बिना बीज जैसे खेती।
घासपूस कुछ मिल जाता है किन्तु न निज वैभव देती॥
तत्व चिन्तवन सत समागम शास्त्रो का अभ्यास महान।
निज स्वभाव का निर्णय करना ज्ञानी की सम्यक् पहचान॥५॥

अरहतो सर्वज्ञो को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
त्यागोपादान शून्य शक्ति से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥

ॐ ह्री त्यागोपादान शून्यत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—त्यागोपादान शून्य है शक्ति समर्थ प्रसिद्ध।
ग्रहणत्याग कुछ भी नही जीव स्वय है सिद्ध॥

❋ ❋ ❋

राग द्वेष अरु मोह रहित बन तीनों दुर्गुण भवदुखकीच।
सम्यक्दर्शन ज्ञान चरित तीनों गुण से तू निज घर सींच॥

१७

षट् स्थान पतित वृद्धि हानि परिणत स्वरूप प्रतिष्ठत्व कारण विशिष्ठ गुणात्मिका

सप्तदशमी — अगुरुलघुत्व शक्तिः

सोरठा— *मात्र स्वरूप प्रतिष्ठ, वृद्धि हानि षड़गुणमयी।*
निज मे रही विराज, अगुरु लघुत्व स्वशक्ति ध्रुव॥

छंद—ताटंक

होती अनत गुण वृद्धि हानि समभावी रहता जीवन है।
यह अगुरु लघुत्व महान शक्ति चैतन्य तत्व का ही धन है॥
परिपूर्ण स्वरूप प्रतिष्ठित हो जब सिद्ध शिला पर जाता है।
निर्मल पर्याय प्रगट करके अपने स्वरूप को पाता है॥१॥

षड़गुण वृद्धि हानि होती है अगुरुलघुत्व शक्ति द्वारा।
अगुरुलघुत्व स्वभाव द्रव्य पर्यायो मे रहता सारा॥
पर्यायो मे वृद्धि हानि होती है छह प्रकार बल से।
ध्रुव सदैव ध्रुव ही रहता है अगुरुलघुत्व शक्ति बल से॥२॥

अगुरुलघुत्व शक्ति सबके ही पास सदा ही रहती है।
षट स्थान पतित वृद्धि अरु हानि रूप परिणमंती है॥
बाहुय प्रतिष्ठा मे उलझा वह नर्क निगोद देखता है।
ध्रुव ज्ञायक की महिमा बिन सारा ससार देखता है॥३॥

है चैतन्य अनत शक्ति सपन्न स्वय परमेश्वर है।
है सामर्थ्यवान अविकल्पी बना बनाया ईश्वर है॥
निज स्वरूप केवली गम्य है जो अचिन्त्य महिमाशाली।
इसके भीतर शक्ति अनतानतो की गुणमय लाली॥४॥

द्रव्य पदार्थ तत्व जितने हैं सभी आत्मा के हैं दास।
सर्वोत्कृष्ट महान शक्ति शाली है तू कर दृढ विश्वास॥

जीव जीव है पुद्गल पुद्गल दोनों सदा परस्पर भिन्न।
भिन्न मान पुद्गल से तू अपने को निज से सदा अभिन्न॥

ज्ञानचंद्रिका प्रगटित होती गुण अनंत नक्षत्रों संग।
दीपावलियाँ मुसकाती हैं निजालोक से दिव्य अभंग॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञो को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
अगुरु लघुत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं अगुरु लघुत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-अगुरु लघुत्व स्व शक्ति से रहती एक समान।
वृद्धि हानि षडगुण मयी कभी न हो असमान॥

❋ ❋ ❋

१८
क्रमाक्रम वृत्ति वृत्तित्व लक्षणा
अष्टादशमी-उत्पाद व्यय ध्रुवत्वशक्तिः

सोरठा—क्रम अक्रम वृत्ति रूप, वर्तन है लक्षण सदा।
उत्पाद व्यय ध्रुवत्व, शक्ति महान प्रसिद्ध है॥

वीरछंद

व्यय उत्पाद ध्रुवत्व शक्ति से सर्व आत्माएँ सम्पन्न।
गुण अनंत युत पर्यायों का पुंज, नहीं है लेश विपन्न॥
वस्तु स्वरूप सदा ही सत् है त्रैकालिक ध्रुव महिमावान।
क्रमवर्ती पर्याय परिणमित होती है प्रति समय प्रधान॥१॥

गुण गुण रूप सदा रहते हैं निश्चय ध्रुव हैं अविकारी।
क्रम अक्रम स्वभाव की महिमा त्रिभुवन में ध्रुव सुखकारी॥
ज्ञान शक्ति के संग अभेद सदा अविचल ही रहता है।
परपर्याय शक्ति के कारण प्रतिपल प्रति क्षण बहता है॥२॥

अनुत्पन्न अथवा विनष्ट पर्यायें सभी ज्ञान का ज्ञेय।
ये सर्वज्ञ ज्ञान से बाहर हों तो कैसा ज्ञानी ज्ञेय॥

दर्शनज्ञानमयी निजात्मा का दर्शन आनंदमयी।
जब निर्मल पर्याय प्रगट होती है निश्चल कर्म जयी॥
है पर्याय सदा क्षणवर्ती एक समय का सत् जानो।
विद्यमान ध्रुव गुण शाश्वत हैं इनकी गरिमाए मानो॥३॥

कर्मोदय में जब विकार करता है तो होता है बंध।
अगर विकार करे न रंच भी तो होता है पूर्ण अबंध॥
जब निर्मल पर्याय प्रगट होगी तो होगा निर्मल सिद्ध।
अगर शक्ति की व्यक्ति न की तो सदा रहेगा मूढ़ असिद्ध॥४॥

ध्येय बना कारण परमात्मा सिद्धों को कर लो वदन।
शीघ्र कार्य परमात्मा बन कर कर लो निज का अभिनन्दन॥
सुनियोजित क्रम से निर्मल पर्याय प्रगट होगी स्वयमेव।
शुद्ध द्रव्य आश्रय से होती ज्ञान शक्ति उज्जवल अतएव॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
व्यय उत्पाद ध्रुवत्व शक्ति से पाऊं शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं व्यय उत्पाद ध्रुवत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—व्यय उत्पाद ध्रुवत्व से सत्स्वरूप पहचान।
परिणत होती प्रति समय निज स्वरूप में जान॥

❋ ❋ ❋

उपादान की चर्चा होते ही निमित्त कुद जाता है।
उपादान बलशाली लखते ही निमित्त उड़ जाता है।

१९
द्रव्यस्वभावभूत ध्रौव्य व्ययोत्पादालिंगित सदृश विसदृश रूपैकास्तित्वमात्रमयी
एकोनविंशतिका-परिणाम शक्तिः

सोरठा—अपने द्रव्य स्वभाव, से आलिंगित है सदा।
सदृश विसदृश रूप, यही शक्ति परिणाम है॥

वीरछंद

यह परिणाम शक्ति चेतन की होते हैं अवश्य परिणाम।
ज्ञान रूप लक्षण है इसका सदा स्व सवेदन का धाम॥
व्यय उत्पाद ध्रौव्य से आलिंगित परिणाम शक्ति सदृश।
ध्वनि उत्पाद ध्रौव्य व्यय की ही आती भीतर से विसदृश॥१॥

अज्ञानी अनुकूल संयोगो में करता सुख बुद्धि भरम।
अरु प्रतिकूल सयोगो मे यह करता है दुख बुद्धि स्वय॥
षटकारक स्वरूप होने वाला ही परम स्वयम्भू है।
जो इसके विपरीत परिणमन करता जलता धू धू है॥२॥

मोह राग द्वेष यम तज, ले दर्शन ज्ञान चरित्र त्रयी।
इसकी सगति कर निंजात्मा कोतज लेये कर्म जयी॥
दर्शन ज्ञान चरित्र आदि परिंणामो मे जो परिणमता।
वह प्राणी अपने स्वभाव निर्मल के प्रति ही है नमता॥३॥

निमित्त आदि. कारक से बचले विकारादि कारक से बच।
षटकारक के भेदो से बच सकल विभावो से ही बच॥
आश्रव के भावो से आता है विभाव का झझावात।
अधड़ आते हैं बंधों के चेतन हो जाता आक्रान्त॥४॥

जब सवर का बल ले करता आस्रव भावों पर आघात।
तभी आस्रव जय हो जाते मिल जाता है ज्ञान प्रपात॥

शुद्ध स्फटिक मणि के समान तू सदा त्रिकाली महिमामय।
राग द्वेष के परिणामों से होता है चहुँ गति दुख मय॥

सदश असदृश पना आत्मा में हैं विद्यमान त्रय काल।
अपने में दोनों सक्रिय हैं परिणामों से सदा निहाल॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञो को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
निज परिणाम शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥
ॐ ह्री परिणाम शक्ति मडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा—महाशक्ति परिणाम है द्रव्य स्वभाव स्वरूप।
पर परिणाम विहीन है निज चेतन चिद्रुप॥

❋ ❋ ❋

२०
कर्मबंधव्यपगम व्यंजित सहजस्पर्शादि शून्यात्म प्रदेशात्मिका
विंशतिका—अमूर्तत्व शक्ति.

सोरठा— *आत्म प्रदेश स्वरूप, रूप गंध रस स्पर्श बिन।*
अर्मूतत्व निजशक्ति, सदा अरूपी एकं है॥

वीरछंद

अमूर्तत्व चेतन की शक्ति निरखना ही सम्यक् पुरुषार्थ।
मूर्त अमूर्त झलकते प्रतिपल यही एक सच्चा परमार्थ॥
धर्म अमूर्त आत्मा का है नहीं मूर्त से है सबध।
इसी शक्ति के बल से होता है प्रति समय जीवनिर्बंध॥१॥

मूर्त कर्म का बंध टूटता सिद्ध दशा प्रगटित होती।
सिद्ध शिला पर सिद्ध वधू भी निज चेतन की छवि जोती॥

शुद्ध प्रकाश मान शुद्ध है नहीं अचेतन पल भर भी।
गगन अचेतन तू है चेतन पर का रंच न तिल भर भी।

द्रव्य दृष्टि से सदा मुक्त है चिदानंद चैतन्य सदैव।
मुक्ति प्राप्ति की युक्ति यही है इसमें ही भरपूर तथैव॥२॥

देह राग ज्ञान तीनो का ही विभिन्न है सदा स्वरूप।
ज्ञान ज्ञान है राग राग है लक्षण ज्ञान जीव अनुरूप॥
शुद्ध ज्ञान का यह प्रमेय है निज में सदा अवस्थित है।
है अपने आकार रूप ही निजस्वक्षेत्र में सुस्थित है॥३॥

कर्माकृति से ढकी हुई है यह आत्माकृति ऊपर से।
चैतन्याकृति ज्ञानाकृति फिर भी निर्मल है भीतर से॥
नियत असंख्य प्रदेशों में ही ज्ञान भाव से ओतः प्रोत।
ध्रुव अनंत गुण मूर्ति आत्मा ज्ञान प्रभा का उज्ज्वल स्रोत॥४॥

अमूर्तत्व चैतन्य शक्ति का स्वामी शिव सुख रस आपूर्ण।
महिमामय परमात्म शक्ति से सदा त्रिकाली सुख से पूर्ण॥
चार कषायों चारों संज्ञा इन पर जय पाना होगा।
दर्शन ज्ञान वीर्य सुख चारों को उर पधराना होगा॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
अमूर्तत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं अमूर्तत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-अमूर्तत्व निज शक्ति ही निज में भरी महान।
जड़ प्रद्गल रूपी प्रथक भिन्न आत्मा जान॥

❋ ❋ ❋

मोक्ष मार्ग अपने भीतर है तू बाहर करता है खोज।
मोह जाल में ही उलझा है भूल गया है अपना ओज॥

२१

सकल कर्मकृत ज्ञातृत्व मात्रातिरिक्त परिणाम करणोपरमात्मिका एकविंशतिका—अकर्तृत्वशक्तिः

सोरठा-लेश न कर्त्ता कर्म, मात्र ज्ञान ज्ञाता स्वयं।
अकर्तृत्व ध्रुव शक्ति, जीव अकर्त्ता है सदा॥

छंद-ताटंक

अकर्तृत्व की शक्ति नहीं जब तक प्रतीति में आएगी।
कर्त्ता पन की गंध बंध मय कभी न तेरी जाएगी॥
रंच मात्र भी राग द्वेष का है कर्तृत्व नहीं पलभर।
ज्ञान मूर्त्ति निज अकर्तृत्व भावों से पूर्ण भरी सुन्दर॥१॥

पुण्यों की सामग्री का सयोग पुण्य से मिलता है।
ज्ञान कमल निज शुद्ध भावना से ही उर में खिलता है॥
पंच महाव्रत के विकल्प से आश्रित मुनि पद कभी नहीं।
तीन चौकड़ी के अभाव बिन होत मुनि पद कभी नहीं॥२॥

अब अनादि मान्यता बदलदे परकर्तृत्व बुद्धि तज दे।
राग लुटेरों को जय कर ले निज सत्ता स्वरूप भजले॥
सब स्वतंत्र हैं कोई भी परतंत्र नहीं है पल भर भी।
एक दूसरे में न किसी का है प्रवेश लघु अणुभर भी॥३॥

है न लेश कर्तृत्व और भोक्तृत्व विभावों का इसमें।
धर्म अनंतानंत उछलते रहते हैं सदैव इसमें॥
आत्म द्रव्य का कार्य किसी के भी द्वारा होता न कभी।
पर का भी तो कार्य किसी के द्वारा होता नहीं कभी॥४॥

भव परिभ्रमण अनादि काल का फिर भी एक समय का है।
आत्म तत्व का पता न जिन को उन्हें नभय भव भ्रम का है॥
त्रैकालिक चैतन्य स्वभावी दर्शन ज्ञानमयी अविकार।
पर के अकर्तृत्व से भूषित नहीं द्रव्य में रंच विकार॥५॥

एक मात्र शुद्धोपयोग से श्रमण निराश्रव होता है।
जो शुभोपयोगी होता है वही साश्रव होता है॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
अकर्तृत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥
ॐ ह्रीं अकर्तृत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-अकर्तृत्व की शक्ति ही कर्त्ता पन से दूर।
जीव अकर्त्ता है सदा चिदानद गुण पूर॥

❋ ❋ ❋

२२

सकलकर्मकृत ज्ञातृत्व मात्रातिरिक्त परिणामानुभवो परमात्मिका द्वाविंशतिका-अभोक्तृत्व शक्तिः

सोरठा- *ज्ञान भाव से भिन्न, भोक्तृत्व परिणाम है।*
ज्ञानी कर्म निवृत्त, अभोक्तृत्व की शक्ति से॥

छंद-ताटंक

अभोक्तृत्व शक्ति के द्वारा पाता है आनंद सघन।
जब चेतन ज्ञायक स्वभाव का करता है सहृदय वेदन॥
परभावों के भोक्तृत्व से यह त्रिकाल रहता है भिन्न।
निज का भोक्ता बन कर रहता निज स्वरूप से सदा अभिन्न॥१॥

हर्ष शोक आदि में सम रह ज्ञाता भावों से रहता।
संयोगों अथवा वियोग में पूर्ण निरास्रव ही रहता॥
मान प्रतिष्ठा के कुचक्र में कभी न आत्म ज्ञान खोता।
निज स्वभाव की दृष्टि बिना अज्ञानी जीव भ्रमित होता।२॥

पत्थर से निर्मित मदिर में पत्थर के रहते भगवान।
किन्तु देह देवालय में रहते चैतन्य देव भगवान॥

अशरीरी सशरीरी बन कर जड़ का दास बना है क्यों।
स्व पर प्रकाशक दीपक तल में अँधियारा रहता है क्यो॥

ध्रुव ज्ञायक में तो विकार का किंचित भी भोक्तृत्व नहीं।
निज स्वभाव में सक्रिय रहता अक्रिय रहता कभी नहीं॥३॥

शुद्ध आत्मा का मंगल आचरण सर्वदा मंगलमय।
सदा सर्वदा स्वभाव परिणति द्वारा होता उज्ज्वलमय॥
निर्मल भावों के स्वभवन से त्रैकालिक की हुई प्रतीति।
शुद्ध स्वभाव भाव आश्रय से होती है पवित्र अनुभूति॥४॥

ध्रुव त्रिकाल निज ज्ञान भाव से जीवित आत्म स्वरूप सदा।
अंतरोन्मुख हो जाते ही है चेतन चिद्रूप सदा॥
अनेकान्तमय मूर्ति शाश्वत पूर्ण प्रकाश मान होती।
स्याद्वाद गंगा के भीतर विद्यमान निर्मल होती॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
अभोक्तृत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं अभोक्तृत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-अभोक्तृत्व की शक्ति निज सदा अभोक्तारूप।
निज स्वभाव का भोक्ता ज्ञानमयी चिद्रूप॥

❁ ❁ ❁

अशरीरी चेतन को मैंने देखा जगत भार ढोते।
जल में मानो आग लगी है क्यों प्राणी सुध बुध खोते॥

२३

सकल कर्मोपरम प्रवृत्तात्मप्रदेश नैष्पंद्यरूपा।
त्रयोविंशतिका निष्क्रियत्व शक्तिः

सोरठा- *कर्म हुए सब क्षीण, तो प्रदेश कंपन मिटा।*
निष्पंदता स्वरूप, निष्क्रियत्व ध्रुव शक्ति है॥

छंद-ताटंक

निष्क्रियत्व शक्ति का धारी ज्ञान भाव ही करता है।
योगों के कंपन क्षयकर के सकल व्याधियाँ हरता है॥
निश्चल निष्क्रिय अचल अकंप आत्मा का अनुभव करता।
वास्तविक सुख से जुड़ जाता निजानंद उर से झरता॥१॥

ज्ञानोदधि की सुखद-तरंगे उछला करती हैं दिनरात।
शक्ति अभेद आत्मा की ले पाता है आनंद प्रपात॥
निर्विकल्प अनुभूति जहाँ हो समकित होता वहीं प्रगट।
भेद ज्ञान की कला प्राप्त कर खंडखंड करता भवघट॥२॥

रागी को एकाग्रभाव से पर भावों में रस आता।
वीतराग भावों से विष रस एक समय में उड़ जाता॥
तिल में तेल दूध में घृत है अग्नि काष्ठ में शक्ति स्वरूप।
सूक्ष्म देह में शुद्ध आत्मा असंख्यात स्व प्रदेश अनूप॥३॥

जहाँ आत्मा वहीं सकल गुण अतः इसी का कीजे ध्यान।
इसी आत्मा के स्वध्यान से हो जाती है मुक्ति महान॥
शाश्वत टंकोत्कीर्ण आत्मा गुण अनंत मय ज्ञान स्वरूप।
नित्य चेतना लक्षण द्वारा प्रगटित होती सत् चिद्रूप॥४॥

आत्म स्वभावोन्मुख होते ही निरविकार अनुभव जाता।
अविनाशी चैतन्य स्वभाव लक्ष्य में होता सुख पाता॥

वे ही चपल जीव ज्ञानी हैं मुक्ति बीज जो हैं बोते।
मुक्ति सुतरु के फल पाते हैं कर्म कलंक सर्व धोते॥

सक्रियत्व या निष्क्रियत्व तो गुण चेतन अविकारी का।
सर्व विसंगतियाँ विघटाता गुण अनंत अधिकारी का॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
निष्क्रियत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं निष्क्रियत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-निष्क्रियत्व की शक्ति से होते कर्मारि क्षीण।
निष्पचता स्वरूप है कंपन योग विहीन॥

❋ ❋ ❋

२४

आसंसार संहरण विस्तरण लक्षण लक्षित किंचिदून चरमशरीरपरिमाणावस्थित लोकाकाश सम्मितात्मा वयवत्व लक्षणा।

चतुर्विंशतिका-नियत प्रदेशत्व शक्तिः

सोरठा- *लोकाकाश प्रमाण, लक्षण निज अवयत्व का।*
नियत प्रदेशत्व शक्ति, आत्मा में ही बस रही॥

छंद-ताटंक

नियत प्रदेश शक्ति के द्वारा निःशंकित है निडर अभय।
है सर्वज्ञ स्वभावी फिर भी निज ज्ञायक से है तन्मय॥
नियत प्रदेशत्व शक्ति से मर्यादित रहता है जीव।
अपने आत्म प्रदेशों की कल्लोलों से भर रहा सदीव॥१॥

एक अरूपी आत्म द्रव्य के लोक प्रमाण असंख्य प्रदेश।
नियत असंख्य प्रदेशों में ही है परिपूर्ण निवास हमेश॥

ज्ञानी जान रहा है प्रति पल पर्यायें होतीं क्रमबद्ध।
जो क्रमबद्ध न जान सका है वह होता कर्मों से बद्ध॥

तन के घटने बढ़ने पर होता संकोच और विस्तार।
असंख्यात रहते प्रदीपवत घटते बढ़ते नहीं विचार॥२॥

लोकाकाश प्रमाण असंख्य प्रदेश सदा है देह प्रमाण।
इसके अवयव भी अभिन्न हैं अपने में हैं महिमावान॥
गुण अनंत से व्याप्त आत्मा के प्रदेश हैं नियत असख्य।
है संकोच विकास मात्र फिर भी निजात्म से सदा सुरम्य॥३॥

निश्चय रत्नत्रय से युक्त आत्मा ही है सच्चातीर्थ।
यही मुक्ति का उत्तम कारण शेष सभी पर भाव कुतीर्थ॥
ज्ञान समुद्र आत्मा अपने नियत प्रदेशों का स्वामी।
नियत प्रदेश शक्ति के बल से हो जाता अंतर्यामी॥४॥

सिद्ध शिला का आमंत्रण भी सर्व प्रदेशों मे छाया।
अब विभाव परिणति ने अपना जाल समेटा दुख पाया॥
आत्म असंख्य प्रदेशवान है पर का इक परमाणु नही।
है सपूर्णतया स्वतत्र ध्रुव पर का लेश प्रमाण नही॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
नियत प्रदेशत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं नियत प्रदेशत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-नियत प्रदेश स्वशक्ति से लोक प्रमाण प्रदेश।
तिल पर भी घट बढ नहीं ऐसा शुद्ध स्वदेश॥

❋ ❋ ❋

तीर्थों में भी देव नहीं है ना पर्वत सरि ऊपर देव।
देव देह देवालय में ही रहते हैं रख याद सदैव॥

२५

सर्वशरीरैक स्वरूपात्मिका

पञ्चविंशतिका-स्वधर्म व्यापकत्व शक्तिः

सोरठा-तनके धर्म स्वरूप, व्याप्य स्वरूपात्मक सदा।
स्वधर्म व्यापक शक्ति, एक स्वरूपात्मक कही॥

वीरछंद

स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति से जीव सयमित सहज सदीव।
निज स्वधर्म में व्याप्त आत्मा निजानंद में मग्न अतीव॥
है शरीर में किन्तु सदा अपने स्वरूप में रहता है।
ऐसा ही अनुबंध आत्मा का अपने से रहता है॥१॥

निज स्वधर्म में सदा आत्मा रहता है रहता आया।
आगे भी यह यहीं रहेगा यह सर्वज्ञ कथन भाया॥
शुद्ध पिंड चैतन्य धातु का है स्वधर्म व्यापक सर्वेश।
विद्यमान अपने में रहता दर्शन मय ज्ञानानंदेश॥२॥

अब विकार में मत निवास कर यह विकार दुखदायी है।
ध्रुव स्वभाव निज में निवास कर जो कि सदा सुखदायी है॥
शुद्ध द्रव्य का निर्णय करते ही पर्याय शुद्ध होगी।
बिना आत्म निर्णय के तेरी बुद्धि नहीं निर्मल होगी॥३॥

जब अंतर्मुख होता है तो होता है वैभव संपन्न।
दृष्टि बहिर्मुख जब होती है मारा फिरता बना विपन्न॥
निज स्वधर्म मेंही व्यापक है व्यापकत्व शक्ति वाला।
देह धर्म से प्रथक सदा है निज चैतन्य ध्यान वाला॥४॥

विद्यमान अपने अनंत धर्मों में यह निर्विघ्न प्रसिद्ध।
परमानंद अमृत रस पायी बना बनाया शाश्वत सिद्ध॥

शुद्ध आत्मा जो न जानते भ्रमते वे चारो गति में॥
शुद्ध आत्मा की रुचि वालों को जिनदर्शन निजमतिमें॥

आत्म द्रव्य का कार्य अन्य के द्वारा कभी नहीं होता।
सब द्रव्यों का कार्य स्वयं के द्वारा ही प्रति पल होता॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्री स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति से है स्वधर्म मे व्याप्य।
आत्मधर्म को छोड़ कर अन्य धर्म अप्राप्य॥

❋ ❋ ❋

२६

स्वपर समाना समान समानासमान त्रिविधभाव धारणात्मिका षष्ठ विंशतिका-साधारणासाधारण साधारणासाधारण धर्मत्व शक्तिः

सोरठा—स्वपर समान असमान अरु समान असमान त्रय।
साधारण असाधारण, धर्मत्व शक्ति को जानिये॥

छंद-ताटंक

स्वपर समान असमान सम असम ऐसी तीन शक्ति सुन्दर।
धर्म अनतानंत किन्तु सर्वोतम धर्म परम सुखकर॥
चेतन मे है ज्ञान सदा ही जड़ में ज्ञान नहीं होता।
साधारण असाधारण धर्म कभी अवसान नहीं होता॥१॥

अन्य पाँच द्रव्यो सम गुण अपने भतर भी रहते हैं।
किन्तु आत्मा के चेतन गुण पर में कभी न बहते हैं॥
पर द्रव्यो से पूर्ण भिन्न है है विकार भावों से भिन्न।
निज स्व द्रव्य से तो अभिन्न है निजस्वभाव मे सदा अभिन्न॥२॥

एक एक परमाणु परिणमित होता स्वतंत्रता पूर्वक।
होता है क्रमबद्ध परिणमन सदा त्रिकाल स्वक्रम पूर्वक॥

स्वयम विवेक सहित निजात्मा का जो करता सम्यक् ज्ञान।
अपरम भाव त्याग बनता निर्भ्रान्त यही सन्यास महान॥
चेतयिता लक्षण से भूषित चेतन अपना शुद्ध त्रिकाल।
जड़ पदार्थ सर्वथा अचेतन दिखने में है किन्तु विशाल॥३॥

छटे सातवें गुण स्थान में भी रहने वाला है कौन।
गुणस्थान से भी अतीत होने वाला ज्ञाता है मौन॥
है सर्वार्थसिद्धि का सुख भी मोक्ष प्राप्ति में अति बाधक।
केवल निश्चय रत्नत्रय ही शिव पथ में तेरा साधक॥४॥

आत्माकालक्षण शरीर है यह मिथ्या मान्यता मिटा।
मिथ्यातम के कारे घन के अंधियारे को दूर हटा॥
स्वतःसिद्ध है परम सिद्ध है सत् चेतन को बंध नहीं।
यदि यह निश्चय नहीं किया तो कभी रुकेगा बंध नहीं॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूं प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूं ध्येय में ले ध्रुव धाम।
साधारण असाधारण धर्म शक्ति से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं साधारण असाधारण साधारण असाधारण शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-साधारण असाधारण है धर्म शक्ति त्रय रूप।
स्व पर विवेक विचार से होता त्रिभुवन भूप॥

* * *

जो व्यवहार छोड़ कर लेते निः शंकित हो निजआश्रय।
वे ही सिद्धो के लघुनंदन शिव सुख योगी कर निर्णय॥

२७

विलक्षणानंत स्वभावभावितैक भाव लक्षणा

सप्त विंशतिका-अनत धर्मत्व शक्तिः

सोरठा- भावित अनत स्वभाव, एक भाव लक्षण सदा।
शक्ति अनंत धर्मत्व, सदा विलक्षण जानियें॥

वीरछंद

है अनंत धर्मत्व शक्ति संपन्न विलक्षण आत्म स्वरूप।
भिन्न भिन्न लक्षण वाले धर्मों से है अनंत अनुरूप॥
धर्म स्वरूप आत्मा जानूं सर्व अधर्म स्वरूप बिसूर।
यही शक्ति कल्याणमयी, हो इसी शक्ति से भव दुख चूर॥१॥

ज्ञान स्वरूप प्रभुत्व शक्ति है भाव स्वरूप विभुत्व अनूप।
एक शक्ति भी विभाव लक्षण वाली है इससे विद्रुप॥
परमात्मा पद के सम्मुख है वही जीव है धर्मात्मा।
अतरात्मा हो कर बनता एक दिवस यह सिद्धात्मा॥२॥

बंध कषाय सहित जीवों को ही होता है यह जानो।
जो कषाय से रहित जीव उनको न बंध होता मानो॥
चार अभाव जानने वाले की स्वभाव पर ही है दृष्टि।
सिद्ध स्वपद को ध्येय बनाकर करता है निज पद की सृष्टि॥३॥

जो चैतन्य स्वभावभाव की विराधना करता है मूढ़।
वही निगोदों में रहता है कैसे हो स्व साधना गूढ़॥
जो अनंत धर्मों के पिंड आत्मा का लेता आधार।
कर्माष्टक को समूल क्षय कर पाता सिद्ध लोक का द्वार॥४॥

पर से भिन्न निराला अद्भुत है चैतन्य मूर्ति भगवान।
निज से तो अभिन्न रहता है यशो जयी हो श्रेष्ठ प्रधान॥

पर ममत्व तज अपने से ही जो अपनत्व मानते हैं।
वे शुद्धात्मतत्व के ज्ञाता सिद्ध स्वरूप जानते हैं॥

जो स्वभाव की रुचि लाकर उसके प्रति उन्मुख होता है।
एक दिवस ऐसा आता है उसको शिव सुख होता है॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
अनंत धर्मत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं अनंत धर्मत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-शक्ति अनंत धर्मत्व की सदा अनादि अनत
भिन्न भिन्न जो धर्म है मंडित चेतन वत॥

***

२८

तदतद्रूप मयत्व लक्षणा

अष्टविंशतिका-विरुद्ध धर्मत्व शक्तिः

सोरठा-अतद्रूपमयता सदा, तद्रूपमयता जान।
विरुद्ध धर्मत्व शक्ति, का लक्षण यह सुप्रसिद्ध है॥

वीरछंद

है विरुद्ध धर्मत्व शक्ति से भूषित चेतन द्रव्य महान।
पर से नास्ति स्वयं से अस्ति यही है एकमात्र पहचान॥
बाह्य पदार्थों से विरुद्ध है निज पदार्थ से है अविरुद्ध।
महिमामय अनंत गुण मंडित ध्रुव ज्ञायक त्रैकालिक शुद्ध॥१॥

निज स्वरूप रचना सामर्थ्य स्ववीर्य शक्ति का सबल प्रताप।
पर से अतद् स्वयं से है तद्रूप आत्मा अपने आप॥
पर से अतत पना है इसका अतत् रूप है रागों से।
परिणति जब विभाव मय होती जाता डसा कुनागों से॥२॥

जो इच्छा विहीन तप करते वे ही पावे शुद्ध स्वरूप।
जो इच्छाओं से प्रेरित हो करते तप वे ही विद्रूप॥

ध्यान चार पिंडस्थ पदस्थ अरु है रूपस्थ रु रूपातीत।
अंतर में प्रवेश करने पर ही होता संसारतीत॥
स्वाभाविक है शक्ति अनंतों वैभाविक हैं शक्ति अनंत्।
सिद्ध स्वभावी शक्ति आत्मा के भीतर है भरी ज्वलंत॥३॥

पर द्रव्यों को अपना मान स्वंय से रहता है विपरीत।
समय सार निज भूल गया है गाता नित विभाव के गीत॥
राग कीच से अज्ञानी को होता है भव कष्ट अपार।
राग कीच से ज्ञानी लिप्त नहीं होता रहता अविकार॥४॥

खंड खंड तन हो जाता पर चेतन रहता पूर्ण अखंड।
क्षण मे राग द्वेष हर्ष से ज्ञानी होते कभी न मंद॥
परम वीतरागी संतों की वाणी का प्रवाह पाकर।
जो चिन्मय में रस लेता है पाता ध्रुव गुण रत्नाकर॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञो को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
विरुद्ध धर्मत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं विरुद्ध धर्मत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-शक्ति विरूद्ध धर्मत्व से अस्ति नास्ति का मेल।
अतद्रूप तद्रूप है ज्ञानी जन का खेल॥

***

आत्म भावना अगर नहीं है तो विभाव की काली रात।
शुद्ध भावना बिना न मिलता किसी जीव को मुक्ति प्रभात॥

२९

तद्रूप भवनरूपा
एकोनत्रिंशतिका-तत्व शक्तिः

सोरठा-तत्व शक्तितद्रूप, चेतन चेतन रूप है।
तत् स्वरूप परिणमन, होता रहता है सदा॥

छंद-ताटंक

तत्त्वशक्ति बिन कोई चेतन रूप नही रह पाता है।
अतत् शक्ति बिन शरीरादि से भिन्न नही हो पाता है॥
लेश न आत्म तत्व में किंचित आस्रवतत्वस्वरूप कभी।
अन्तरोन्मुख होती है पर्याय विकारी नही कभी॥१॥

रत्नत्रयरूपी निर्मल पर्यायो मे है चेतन व्याप्त।
बध आस्रवकी पर्यायो मे है यह सदेव अव्याप्त॥
सवर प्रत्यख्यान ज्ञान दर्शन मे होता चेतन व्याप्त।
कर्म निर्जरा पूरी करके हो जाता त्रिभुवन पति आप्त॥२॥

आत्म तत्व से विरुद्ध करके प्ररूपणा तू मनमानी।
विपरीताभिनिवेश पूर्वक रहता है कैसा ज्ञानी॥
पर भावो का त्याग कार्यकारी है यह निश्चय से जान।
जब अविकल्प दशा होती है तब होता शिवमय निर्वाण॥३॥

मात्र द्रव्य सयम से होती है ग्रैवेयक की उपलब्धि।
तत्वशक्ति के भान बिना होती न मोक्ष की उत्तमसिद्धि॥
निर्णय जब यथार्थ होता है होती है निर्मल पर्याय।
बिना ज्ञान अभिषेक आत्मा चहुँगति पाता भव दुखदाय॥४॥

आत्म द्रव्य में कहीं राग का अंश नही होता अणुभर।
यह सर्वांश शुद्ध परिणमन करता हो निज मे तत्पर॥

तीन काल तीनों लोकों में मुक्ति मार्ग है केवल एक।
शुद्ध आत्मा का चिंतन ही परभावों से है व्यतिरेक॥

जो स्वभावरस पीने को आतुर हैं वे हैं सम्यक्दृष्टि।
जो विभाव विष के मतवाले वे ही केवल मिथ्या दृष्टि॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
तत्व शक्ति का बल प्रगटाकर पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं तत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-*तत्व शक्ति तद्रूप है सदा स्वतत्र प्रसिद्ध।*
निज में परिणमती सदा होते प्राणी सिद्ध॥

***

३०
अतद्रूप भवनरूपा
त्रिंशतिका- अतत्व शक्तिः

सोरठा- *अतत्रूप नहिं परिणमें, तत्व स्वरूप महान।*
चेतन जड़ होता नहीं, अतत्व शक्ति लक्षण सदा॥

छंद-ताटंक

चेतन का जड़ रूप न होना सदा अतत्व शक्ति उज्ज्वल।
चेतन का चैतन्यरूप रहना ही तत्व शक्ति निर्मल॥
सारे ही पर भाव सदा ही अतद्रूप भासित होते।
ज्ञानी रागादिक में एकाकार परिणमित कब होते॥१॥

निज स्वतत्व में उपादेय की बुद्धि अगर है तो जानो।
पर भावों में हेय बुद्धि होती स्वय मेव सत्य मानो॥
चेतन ने पर ग्रहण किया नहिं तो फिर पर का कैसा त्याग।
जब स्वभाव का भान हो गया विलय हो गया सारा राग॥२॥

विषय कषायों की छलनामें जैसे लगता है यह मन।
उसी भांति निज शुद्ध आत्मा में ही रह मेरे चेतन॥

जो निजात्मका दर्शन करते वे ही होते सिद्ध महान।
जो निजात्मा नही जानते वे पाते भव कष्ट प्रधान॥
अतत्‌रूप तत्‌रूप जानकर तत्व अतत्व शक्ति जानो।
भावाभाव अभाव भाव की परमशक्ति को पहचानो॥३॥

तत्व शक्ति तद्‌रूप गुणमयी शक्ति अतत्व अतत् रूपी।
इनसे चेतन सदा अलंकृत शोभित होता चिद्रूपी॥
अनुभव गोचर ज्ञानगम्य शक्तियाँ अनंतानंत स्वगेह।
इन्द्रिय गोचर विकल्प गोचर लेश नहीं है निःसंदेह॥४॥

जब तक योगों का कंपन है तब तक कर्म आगमन है।
योग अभाव अगर हो जाए फिर न कर्म का बंधन है॥
जिनपद निजपद भेद नहीं है यही लक्ष्य में ले तत्काल।
आगम का मंतव्य यही है तत्त्व अभेद अखंड विशाल॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
शुद्ध अतत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं अतत्त्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं.नि.।

दोहा- शक्ति अतत्व सुजानिये चेतन चेतन रूप।
पलभर भी जड़ हो नहीं यही अतत्त्व अरूप॥

❁ ❁ ❁

३१
अनेकपर्याय व्यापकैक द्रव्यमयत्व रूपा
एकत्रिंशतिका-एकत्व शक्तिः

सोरठा- *व्यापक सब पर्याय में, एक द्रव्य मयता सहज।*
शक्ति यही एकत्व, एकी भाव प्रसिद्ध है॥

सहज सिद्ध सुख पाना है तो सिद्धों का लघु नंदन बन।
एक समय में मिट जाएगा यह अनादि चहुँ गति क्रन्दन॥

छंद-ताटंक

एक द्रव्य मय पने रूप एकत्व शक्ति ही है व्यापक।
अनेकत्व शक्ति के कारण पर्यायों में भी व्यापक॥
ज्ञान स्वरूपी निश्चय ध्रुव परमार्थ भूत एकत्व स्वरूप।
मुकुट बाँध सम्यक्ज्ञान का प्रगटाता निज आत्म अनूप॥१॥

यदि निज मे एकत्व बुद्धि है तो रागवसान निश्चित।
रागों मे एकत्व बुद्धि है तो है अकल्याण निश्चित॥
जब तक दृष्टि निमित्त पर है पामरता का लक्षण है।
अगर राग मे हित की बुद्धि बनी है तो यह दूषण है॥२॥

अ सि आ उसा पांचो परमेष्ठी यह ही तो है आत्मा।
इसकी शरण प्राप्त करते ही हो जाता है परमात्मा॥
ब्रह्मा विष्णु महेश यही है यही आदि तीर्थ कर वीर।
यही बुद्ध है यही शुद्ध है सीमंधर है गुणगभीर॥३॥

जड़ स्वभाव आश्रय के कारण भूला निज चैतन्य स्वभाव।
निश्चय का सिद्धान्त न समझा करता है प्रति समय कुभाव॥
व्यय उत्पाद ध्रौव्य युतसत् का सम्यकज्ञान अगर होगा।
तो एकत्व शक्ति के बल से तेरा सिद्ध नगर होगा॥४॥

देहरूप जड़ कभी न होता पलभर भी तो इसमे व्याप्त।
हार मुकुट की सर्व अवस्थाओं में ज्यो सोना है व्याप्त॥
व्यय उत्पाद अवस्था मे भी एक मात्र ध्रुव होता व्याप्त।
ध्रौव्य स्व धर्म शक्ति के द्वारा अपने मे है पूरा व्याप्त॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
निज एकत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्री एकत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

चिदानंद निजवस्तु न भूलो पर की वस्तु न अपनी मान।
सिद्ध शिला का मिला निमंत्रण वस्तु स्वयं की ही निज जान॥

दोहा-महा शक्ति एकत्व ही व्यापक सबपर्याय।
एक द्रव्य मयता सदा शाश्वत शिव सुखदाय॥

***

३२

एक द्रव्य व्याप्यानेक पर्याय मयत्व रूपा द्वात्रिंशतिका-अनेकत्व शक्तिः

सोरठा-एक द्रव्य से व्याप्य, जो कि व्यापने योग्य है।
अनेक पर्याय मय पना, अनेकत्व की शक्ति है॥

वीरछंद

अनेकान्त मय मूर्ति स्वयं की नित्य प्रकाशित महिमावंत।
सर्वधर्म का समावेश कर रहती है सर्वदा ज्वलंत॥
एक द्रव्य मय पना विविध पर्याय मय पना शक्ति विचित्र।
अनेकत्व की शक्ति स्वयं में व्याप्य रही है परम पवित्र॥१॥

मोह भाव से असत्यार्थ के प्रासादों में रहता है।
विपरीताभिनिवेश ओढ़कर भव धारा में बहता है॥
समवशरण या देव शास्त्र गुरु से होता उद्धार नहीं।
निज शुद्धात्म स्वदेव जपे बिन होगा भव से पार नहीं॥२॥

राग द्वेष दोनों को तज, हो दर्शन ज्ञान मात्र से युक्त।
शुद्ध आत्मा को ही भज ले होगा तू शिव सुख संयुक्त॥
अनेकत्व का गूढ़ रहस्य समझना ही पुरुषार्थ महान।
स्याद्वाद की महिमा द्वारा होता सिद्ध स्व पद निर्वाण॥३॥

त्रिभुवन में अहमिन्द्र देवपद है सर्वार्थ सिद्धि शुभरूप।
सर्वोत्कृष्ट मोक्ष पद से विपरीत स्वर्ग साता अनुरूप॥
सर्वज्ञों का अभिनंदन ही मोक्ष मार्ग पर आता है।
मुक्ति पंथ के पथिकों को ही मोक्ष सौख्य मिल पाता है॥४॥

पर ब्रह्म को ज्ञान नेत्र से जिसने निरखा प्राप्त किया।
ध्यान शक्ति से निज दर्शन कर परतेज परिपूर्ण लिया॥

सर्वदीनता का अभाव है शुद्ध आत्म वैभव के मध्य।
अनेकान्त का पावन फल सम्यक एकान्त स्वयं अतिभव्य॥
क्षयोपशम देशना विशुद्धि प्रायोग्य करण लब्धिविख्यात।
समकित होते ही होती है ज्ञानामृत रसकी बरसात॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
अनेकत्व शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं अनेकत्व शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-अनेकत्व की शक्ति से हो पर्याय अनंत।
एक द्रव्य से व्याप्त है, गरिमा महिमावत॥

***

३३
भूतावस्थत्व रूपा
त्रयत्रिंशतिका-भाव शक्तिः

सोरठा-युक्त अवस्थारूप, विद्यमान है भाव निज।
भाव शक्ति की शक्तिं, से भ्रव भार हटाइये॥

छंद-ताटंक

भाव शक्ति के कारण है परभावों से भिन्नत्व सदा।
ज्ञान भाव की परिणति होती निज स्वभाव से सद्‌सदा॥
सर्व विभाव हेय होते हैं जब जगता है चिन्मय भाव।
शुद्ध स्वभाव दृष्टि होते ही हो जाता अज्ञान अभाव॥१॥

ज्ञायक ध्रुव के गीत गूँजते भवन देख अविकारी का।
आदि अत से रहित सौख्य है चिदानंद शिव कारी का॥
पर्यायें जो विद्यमान हैं अविद्यमान हैं वचनातीत।
द्रव्य सदा इन में व्यापक है ध्रौव्य स्वभावी सब को जीत॥२॥

गंभीर रहस्य जानने का उत्तम उपाय तू ज्ञाता बन।
चैतन्य चमत्कारी हीरा प्रति समय निरख तू दृष्टा बन॥

निज दर्शन ही सम्यकदर्शन सम्यज्ञान स्वयं का ज्ञान।
निज में बसना ही सम्यक्चारित्र यही रत्नत्रय यान॥
गुण अनंत प्रत्येक आत्मा के पर्याय अनंतानंत।
एक समय की पर्यायों में ध्रुव व्यापक है महिमावंत॥३॥

परभावों के आश्रय से होती निर्मल पर्याय नहीं।
अविकारी भावों से होती है उज्ज्वल पर्याय सही॥
भाव औदयिक उपशम क्षायिक क्षयोपशम सुअगोचर है।
परम पारिणामिक स्वभाव ही परिणामों से गोचर है॥४॥

शेष चार भावों से विरहित निज स्वभाव में रत्त त्रिकाल।
भावविकारी पुण्याश्रव से भूला अपना सत्त्व विशाल॥
सभी विकारी भाव शुभाशुभ आस्रव बंध भाव से पूर्ण।
संवर और निर्जरा ही तो करती कर्म बंध सबचूर्ण॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
भाव शक्ति के उज्ज्वल बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं भाव शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- भाव शक्ति चैतन्य की पर का सदा अभाव।
ज्ञानभाव परिणमन कर पाता शुद्ध स्वभाव॥

***

३४
शून्यावस्थत्व रूपा
चतुस्त्रिंशतिका-अभाव शक्तिः

सोरठा- *शून्य अवस्था युक्त, अविद्यमान को जानिये।*
अमुक अवस्था रूप, शक्ति अभाव महान है॥

स्वानुभूति पूर्वक सम्यक्दर्शन ही महा मोक्ष का द्वार।
अथक परिश्रम करके श्रमण सदा होते भव सागर पार॥

छंद-ताटंक

शक्ति अभाव स्वय के कारण पर भावो से शून्य सदा।
मात्र स्वभाव भाव से भूषित पर मे जाता नहीं कदा॥
पर भावो से भिन्न आत्मा सर्वकलाओ से आपूर्ण।
एक मात्र शिव सुख अधिकारी सदा सर्वदा निज में पूर्ण॥१॥

इस प्रकार के अध्यवसानादिक भावो का करपरिहार।
बध भाव स्वयमेव विलय हो जाता हर सपूर्ण विकार॥
ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प से बधन कभी न टूटेगा।
ध्यान ध्येय ध्याता विकल्प से भव घट कभी न फूटेगा॥२॥

जो स्वाधीन परिणमित होता वह कर्त्ता कहलाता है।
जो स्वतत्रता पूर्वक होता वही कर्म कहलाता है॥
जो स्वाधीन स्वय द्वारा हो वही करण कहलाता है।
जिसमे से जो भाव हुआ वह सप्रदान कहलाता है॥३॥

प्रगट भाव जिसमे रहता वह अपादान कहलाता है।
निजाधार से जो होता है वह अधिकरण कहाता है॥
षटकारक पूरे स्वतत्र है पराधीनता लेश नही।
पर के तो परमाणु मात्र का इसमे कही प्रवेश नही॥४॥

निज से ही जो क्रिया हुई है वही क्रिया कहलाता है।
है स्वतत्र सबध सदा सबध वही कहलाता है॥॥
चेतयिता चैतन्य स्वभावी करता निज अनुभव रसपान।
इसमे ही अवगाहन करके करता है अविरल सुस्नान॥५॥

अरहतो सर्वज्ञो को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
शुद्ध अभाव शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥
ॐ ह्री अभाव शक्ति मडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- शक्ति अभाव पिछानिये अविद्यमान को जान।

सब प्रकार की बाधाओं से मुक्त सर्व संयोग रहित।
वीत राग जिनदेव भावना ही सर्वज्ञ स्वभाव सहित॥

परभावों का स्वयं में है अभाव मतिवान॥

***

३५

भवत्पर्याय व्ययरूपा

पञ्चत्रिंशतिका-भावाभाव शक्तिः

सोरठा- *प्रर्वतमान पर्याय, व्यय रूपी है जानिये।*
भावा भाव स्वशक्ति, आत्मा में विद्यमान है॥

वीरछंद

भावाभाव शक्ति चेतन की स्वतःपूर्णतः है निजभाव।
उदय रूप पर्याय भाव है व्यय रूपी पर्याय अभाव॥
व्यय उत्पाद सदैव प्रति समय तो पर्यायों का होता।
द्रव्य त्रिकाली ध्रुव रह कर अपने स्वभाव को ही जोता॥१॥

शरीरादि जड़ का अभाव है राग द्वेष का सतत अभाव।
है अवलंबन भूत त्रिकाली शुद्ध आत्मा का निजभाव॥
सिद्ध दशा का वर्तमान में तो दिखता है पूर्ण अभाव।
सिद्ध दशा का भाव अभी भी विद्यमान है यह सद्भाव॥२॥

नाम कर्म की प्रकृति तीर्थंकर भी तो है पूरी हेय।
सहजस्वभाव रूप आत्मा ही का बल है उत्कृष्ट उपेय॥
स्वपर प्रकाशक ज्ञान आत्मा के भीतर है पूरा व्याप्त।
सर्व प्रदेशों में अनंत गुण ही तो है सर्वांश सुव्याप्त॥३॥

तीर्थंकर भगवंतों के शिव पथ में मात्र आत्मआधार।
इसी शक्ति के बल से तीर्थंकर हो जाते भव के पार॥
जितने सिद्ध हुए हैं अब तक इसी रीति से सिद्ध हुए।
जो इसके विपरीत चले वह कर्म बाण से बिद्ध हुए॥४॥

गुणस्थान जब त्रयोदशम में आते तो होते सर्वज्ञ।
चतुर्दशम में हो अयोग केवली ततक्षण सिद्ध रसज्ञ॥

ध्यान हीन को कभी न हो सकता निज परमात्मा दर्शन।
है अध्यात्म कला विहीन तो उसको है मिथ्यादर्शन॥

शुद्ध स्वभावभाव जाग्रत कर इससे होगा ध्रुव कल्याण।
समल अमल चर्चा को तज दे अनुभव से कर दुख अवसान॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञो को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानंत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
भावा भाव शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं भावाभाव शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-भावाभाव स्व शक्ति का जगत प्रसिद्ध महत्त्व।
उदय तथा व्यय को सदा जान रही अजड़त्व॥

***

३६

अभवत्पर्यायोदय रूपा

षटत्रिंशतिका-अभावभाव शक्तिः

सोरठा- अप्रवर्त्तमानपर्याय, उदय रूप को जानिये।
अभावभाव मय शक्ति, गौरव मयी त्रिकाल है॥

वीरछंद

शक्ति स्वभाव भाव होती है चेतन का है यही स्वभाव।
पर विभाव का तो पूरा ही होता है परिपूर्ण अभाव॥
विद्यमान है ज्ञान आत्मा में यह दशा भावशाली।
शून्य अवस्था जो अविद्य है रहती है अभावशाली॥१॥

ध्रुवस्वभाव तो सदा विभावों के अभाव वाला ही है।
आकुलत्व अज्ञान कषायों के अभाव वाली ही है॥
इस में कोई भी विकल्प होता न कभी आगे होगा।
अविकल्पी शुद्धात्मतत्व दृष्टित होते ही सुख होगा॥२॥

चिन्तामणि रत्नों का सागर निज अनुभव ही परम प्रसिद्ध।
शिव सुख स्रोत शान्ति का सागर अनुभव से होता है सिद्ध॥

तीर्थंकर भगवन के पथ में कारण एक आत्मा शुद्ध।
कोई भी पर कारण शिवपथ में होता सर्वथा अशुद्ध॥
देवशास्त्र गुरु का यथार्थ श्रद्धान भान बिन कैसे हो।
आत्म तत्त्व की प्रतीति के बिन सम्यक् दर्शन कैसे हो॥३॥

आत्म दृष्टि होते ही प्रगटित आत्म भानु होता सुप्रसिद्ध।
आत्म दृष्टि का बल पाकर ही होता जीव शाश्वत सिद्ध॥
कारण शुद्ध जीव ही केवल परम पारिणामिक निज भाव।
शेष चार भावों का भी इस में रहता है पूर्ण अभाव॥४॥

कर्मोदय अनुसार विकार हुआ करता यह है मिथ्या।
क्रम स्वभाव को जाने बिन क्रमबद्ध कथन भी है मिथ्या॥
निज स्वभाव परिणति का स्वामी है चैतन्य महाप्रभु धन्य।
जो अपने स्वरूप से है अनभिज्ञ वही क्या नहीं अभव्य॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
अभावभाव शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं अभाव भाव शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- अभावभाव की शक्ति से पर का सदा अभाव।
निज स्वभाव का भाव है ऐसा आत्म स्वभाव।

* * *

३७
भवत्पर्याय भवनरूपा
सप्तत्रिंशतिका-भाव भाव शक्तिः

सोरठा-प्रवर्तमान पर्याय, भवनरूप पहिचानिये।
भाव भाव मय शक्ति, तीनों काल प्रसिद्ध है॥

सत्स्वरूप की श्रद्धा का माहात्म्य प्रगट है जिन के पास।
वे ही ज्ञाता दृष्टा होकर मुक्ति पुरी में करते वास॥

छंद-ताटंक

वर्तमान पर्याय भाव रूपी है एक समय का सत्।
भावरूप है भाव भाव मय शक्ति जीव है ध्रुवशाश्वत॥
पर से तू निरपेक्ष स्वयं से है सापेक्ष समुद्र विशाल।
गुण अनंत के रत्न भरे हैं तेरे भीतर ध्रौव्य त्रिकाल॥१॥

इन्द्रिय ज्ञान अगोचर है तू ज्ञान गम्य अनुभव गोचर।
राग जानने में आता है राग सदा विकल्प गोचर॥
पर्यायों का क्षय होता है आत्मा का क्षय कभी नहीं।
पर्यायें कम वर्ती होती गुण का अक्रमरूप सही॥२॥

सिद्ध सदा ही ढाई द्वीप से होते हैं यह कर विश्वास।
दयादान पूजादि व्रतों के उपवन में संसार निवास॥
त्रिलोकाग्र में सिद्ध शिला है उस पर ही कर सदा निवास।
निज ज्ञायक के ही उपवन में ध्रुव स्वरूपमय है आवास॥३॥

स्वर्गों के नदनवन की आभा फीकी पड़ जाती है।
निज स्वरूप परिणति की महिमा जब चेतन को आती है॥
अनुभव की उत्ताल तरंगें प्रति पल उठतीं परमपवित्र।
ज्ञानदीप की शिखा प्रज्जलित होती दिखते उज्ज्वल चित्र॥४॥

निज स्वभाव परिणति भी छम छम सुविधि नृत्य करती प्रतिपल।
मुक्ति प्रिया के वाद्य बजाती गाती गीत सतत निर्मल॥
धू धू अरिरज जल जाती है केवल चेतन रहता शेष।
यथाख्यात चारित्र प्रगटकर लेता अरहंतों का वेश॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञो को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
भाव भाव शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं भाव भाव शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

जो मिथ्यात्व मोह के कारण स्वपर विवेक हीन रहता।
सम्यक्दर्शन के दर्शन बिन भव दुख धारा में बहता॥

दोहा-भाव भाव मय शक्ति से सदाभाव अनुरूप।
लेश न कहीं अभाव है एकमात्र चिन्रूप॥

❋ ❋ ❋

३८

अभवत्पर्याया भवनरूपा

अष्टत्रिंशतिका-अभावाभाव शक्तिः

सोरठा-अप्रवर्तमान पर्याय, अभवन रूप पिछानिये।
शक्ति अभावाभाव, आत्मा में रहती सदा॥

वीरछंद

जो पर्याय अभावरूप है उदय काल में भाव स्वरूप।
भावरूप भी व्यय हो जाती रहता है ध्रुव वस्तु स्वरूप॥
वर्तमान पर्यायों में है गत आगत का पूर्ण अभाव।
पर अभाव त्रयकालवर्तता ऐसी शक्ति अभावाभाव॥१॥

जो व्यवहार मूढ हैं उनको लेश तत्व उपदेश नही।
जो निश्चय का आश्रय लेते उन को भव दुख क्लेश नहीं॥
निर्मलता जिससे होती हैं प्राप्त वही है आत्म स्वभाव।
होत है उत्पन्न विकार वही है पूरा राग विभाव॥२॥

व्रत तप का शुभ राग आत्मा की प्रसिद्धि का हेतु नहीं।
अन्तरोन्मुख दृष्टि न हो तो आत्म सिद्धि होती न कहीं॥
जो विकल्प गोचर है उससे अणु भर भी संबंध नही।
जो अनुभवगोचर है उससे होता किंचित् बंध नहीं॥ ३॥

सर्वशक्तियों के समूह से सदा अलंकृत महिमामंड।
निज स्वभावपति दृष्टा ज्ञाता की ही शक्ति महान प्रचंड॥
सर्व अजीव सजीव त्रिकाली सदा परस्पर में है भिन्न।
चैतन्याश्रय लेने वाला जीव स्वयं से सदा अभिन्न॥४॥

योगी साधु अयोगी बनकर पालेते निजपद निर्वाण।
सर्वकर्ममल का विनाश कर पालेते शिव मय कल्याण॥

४०

कारकानुगत भवत्तारूप भावमयी

चत्वारिंशतिका-क्रिया शक्तिः

सोरठा- *कारक के अनुसार, भवन रूप हो परिणमित।*
भावमयी पहचान, क्रिया शक्ति निज जीवकी॥

वीरछंद

निज स्वभाव मय क्रिया शक्ति ही शुद्ध आत्मा का है कर्म।
पर की क्रिया नही करती है निज की क्रिया यही है धर्म॥
निज चैतन्य स्वभाव दृष्टि मे लेते ही होता रोमाञ्च।
निज अचिन्त्य प्रभुता पाते ही लेश न रहती भव की आँच॥१॥

निज चैतन्य स्वरूप वीतरागी स्वक्रिया से होता शान्त।
रागक्रिया से शुद्ध भाव होता न कभी जानो निभ्रान्त॥
साधक शुद्ध भाव आश्रय से क्रिया धर्म की करता है।
सर्व विभावी धर्मों को प्रति समय सहजही हरता है॥२॥

लक्षित हुआ ज्ञान लक्षण से अनेकान्त मय ध्रुव भगवान।
मात्र ज्ञान से ही मिलता है ज्ञानानद स्वरूप महान॥
त्वरित ज्ञानलक्षण प्रसिद्धकर अनेकान्त फल पायेगा।
धर्म अनंतानत प्राप्त कर सिद्धशिला पर जायेगा॥३॥

बिना किसी रागादिभाव के निज में जो तन्मय रहता।
अपने कर्म रूप रहकर ही क्रिया शुद्ध में वह बहता॥
ससारी को गुण स्थान हैं असंसारि को लेश नहीं।
असंसारि सर्वांश सुखी ससारी को सुख लेश नही॥४॥

नर सुर नारक पशु निगोद की पर्यायें क्षण भंगुर हैं।
अविनश्वर शुद्धात्म तत्त्व को भूल भ्रमे हम पर घर हैं॥

जो परमार्थ शरण लेता है सकल अनत शक्ति पाता।
अभूतार्थ के घन विघटाता निजालोक पा हर्षाता॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
क्रिया शक्ति के पावन बल से पाऊँ शिवपुर मे विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं क्रिया शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- क्रिया शक्ति से पूर्ण है निज की क्रिया सजीव।
पर की क्रिया विहीन है पर है पूर्ण अजीव॥

❋ ❋ ❋

४१

प्राप्यमाण सिद्धरूप भावमयी
एकचत्वारिंशतिका-कर्मशक्तिः

सोरठा- *प्राप्त किया जो भाव, सिद्ध रूप अति शुद्ध है।*
उस मय कर्म स्वशक्ति, अपनी को अब जानिये॥

छंद-ताटंक

अपनी कर्म शक्ति को जिसने निःशंकित हो पहचाना।
अपने भावों के अनुसार लिया उत्तम सुख मनमाना॥
शुद्ध आत्मा कर्त्ता है अरु यही कर्म है करण यही।
संप्रदान है अपादान है शुद्धरूप अधिकरण यही॥१॥

यह षटकारक इनका ही संबंध आत्मा से सुविशुद्ध।
ये सब आत्मा से अभेद है इसीलिए आत्मा है शुद्ध॥

सारे उपदेशों का निचोड़ सम्यक्त्व प्राप्ति का कर उपाय
लब्धियाँ पाँच तूने पायी आये हैं स्वतः पंच समवाय॥

ज्ञाता दृष्टा यही आत्मा इनका ही तू ले आधार।
मात्र स्वसवेदन के द्वारा निज स्वलक्ष्य बल से हो पार॥२॥

जिव्हा का चाकर मत बनतू भक्ष्य अभक्ष्य विवेक न छोड़।
विषय कषायो से निवृत्ति ले परभावों से निज को मोड़॥
अध्यवसान नही है मुनि को अतः कर्मरज से निर्लिप्त।
जो भी अज्ञानी होता है वह रहता कर्मों से लिप्त॥३॥

अस्वाभाविक सयोगी तन कृत्रिम नाशवान पर्याय।
इन्द्रिय गोचर नही ज्ञान गोचर है जीव सदा सुखदाय॥
सम्यक्दर्शन श्रद्धा गुण की है निर्मल पर्याय प्रसिद्ध।
तथा ज्ञान गुण की निर्मल पर्याय ज्ञान से है अविरुद्ध॥४॥

है चरित्र गुण की पर्यय सुख शान्ति रूप चारित्र प्रसिद्ध।
गुण अनत की निर्मल पर्यये होते ही होता सिद्ध॥
अगर ज्ञान पर्याय आत्म द्रव्योन्मुख है निर्णय करले।
तत्क्षण रागविहीन अवस्था पायेगा निश्चय करले॥५॥

अरहतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय मे ले ध्रुव धाम।
उज्ज्वल कर्म शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं कर्म शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- कर्म शक्ति निजभाव मय करती है निजरूप।
पर का कुछ करती नहीं है सदैव चिद्रूप॥

घन घातिया कर्म सब क्षय कर हुए सिद्ध अरहंत महंत।
फिर अघातिया भी क्षय करके क्षण में हुए सिद्ध भगवंत॥

४२

भवत्तारूप सिद्धरूप भाव भावकत्वमयी
द्विचत्वारिंशतिका-कर्तृत्व शक्तिः

सोरठा- *सिद्धरूप जो भाव, वही परम उत्कृष्ट है।*
भावकत्व मय एक, कर्तृत्व शक्ति जानिये॥

छंद-ताटंक

निज कर्तृत्व शक्ति के कारण निज भावों में सक्रिय है।
पर भावों से भिन्न सर्वथा पर भावों में निष्क्रिय है॥
कर्मरूप से स्वयं आत्मा निज में ही परिणमित सदा।
कर्तारूप परिणमित होता निज भावों में स्वतः सदा॥१॥

मात्र भगवती प्रज्ञा से ही शुद्ध भाव को जानरहा।
शक्तिमान अपने निजात्मा को प्रतिक्षण पहिचान रहा॥
सब द्रव्यों में जीव द्रव्य ही है सबसे महान जानो।
जीव द्रव्य में पाँचों परमेष्ठी सबसे प्रधान मानो।२॥

पाँचों परमेष्ठी में हैं अरहंत सिद्ध अति बलशाली।
सिद्ध दशा पाने की अपनी शक्ति महा वैभववाली॥
अतः अनंत शक्ति का धारी शक्तिवंत है निजआत्मा।
इसको ही भजने से हो जाते है सभी सिद्ध आत्मा॥३॥

कर्म विपाकोदय होने पर अध्यवसान भाव होता।
अध्यवसान भाव होते ही निश्चित कर्म बंध होता॥
जो स्वाधीन परिणमित होता वह कर्ता निज भावों का।
पराधीन परिणमने वाला दास बना पर भावों का॥४॥

कोई कार्य किसी के द्वारा होता कभी नहीं, सिद्धान्त।
एकद्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्ता कहना है एकान्त॥

मोही जीव अनादिकाल से भव सागर में बहता है।
निर्मोही भव सागर शोषित कर स्वभाव में रहता है॥

सुप्रभात का उदय अगर पाना है तो बन सम्यक्दृष्टि।
विभ्रमके घन छट जाएँगे नही रहेगा मिथ्यादृष्टि॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञो को मै विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति सपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
निजकर्तृत्वशक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥
ॐ ह्री कर्तृत्वशक्ति मडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- कर्तृत्व शक्ति की मुख्यता निजकर्तृत्वस्वरूप।
अकर्तृत्व परद्रव्य की है स्वभाव अनुरूप॥

❋ ❋ ❋

४३

भवद्भाव भवन साधकतमत्व मयी
त्रिचत्वारिंशतिका-करण शक्तिः

सोरठा- *साधकतम साधनमयी, प्रवर्तमान निज भाव।*
भवनस्वरूपी एक, करण शक्ति साधक स्वयं॥

छंद-ताटंक

समकित से ले सिद्ध दशा तक पाने का जो है साधन।
करण शक्ति का यही कार्य है वीतरागता मय पावन॥
शक्तिमान मेरा स्वरूप ही सर्व शक्ति सागर साधन।
निमित्त राग व्यवहार आदि उत्पाद दृष्टि से है साधन॥१॥

निश्चय साधन का विश्वास पराश्रय बुद्धि तोड़ता है।
अतरदृष्टि जीव अपने आश्रय से इसे जोड़ता है॥
जयतप सयम पंच महाव्रत के साधन उपचार स्वरूप।
निश्चय साधन निज स्वभाव का एक मात्र चेतन चिद्रूप॥२॥

लौकिक लक्ष्मी का बल पाकर पर भावों मे भूल रहा।
मुक्ति लक्ष्मी का बल पाले क्यों तू पर में भूल रहा॥

जिसकी है पर्याय दृष्टि वह क्षण भंगुर को पाता है।
जिसकी है ध्रुव दृष्टि वही शाश्वत जीवन को पाता है॥
द्रव्याश्रय से ही गुण रहते विद्यमान सर्वथा सदा।
ध्रुव साधन को भूल जा रहा जड़ साधन की ओर सदा॥३॥

मुक्ति कहो या कहो शुद्धता यही मोक्ष का पथ महान।
आत्मवस्तु संपन्न अनंतानंत शक्ति से महिमावान॥
जिससे होता लाभ उसी से होती वृद्धि एकता की।
आनंदादि अनंत गुणों से होती मति अनेकताकी॥४॥

ध्रुव आनंदोल्लास पूर्वक करण शक्ति को पहचानो।
निजस्वद्रव्य आश्रय से गुण रहते है यह निश्चय जानो॥
परके दुख को दूर करूँ ऐसा विचार भी है आस्रव।
रागभाव की विषमय मंदिरा मोहभाव रस का आसव॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञो को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनतानत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
करण शक्ति के उत्तम बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं करण शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- करण शक्ति साधन स्वयं साधक है स्वयमेव।
नही किसी का आश्रय अमित अनत अमेव॥

❋ ❋ ❋

४४

स्वयं दीयमान भावो पेयत्वमयी

चतुःचत्वारिंशतिका-सम्प्रदान शक्तिः

सोरठा-उपेयत्व का पात्र, अपने द्वाराही दिया।
योग्य पना मय श्रेष्ठ, संप्रदान की शक्ति है॥

जो पर भाव त्याग देता है वही आत्म ज्ञानी होता।
जो विभाव में रत रहता है वह तो अज्ञानी होता॥

छंद-ताटंक

संप्रदान की शक्ति आत्मा मे त्रिकाल ही बहती है।
अपने से ही दिया जाय वह शक्ति स्वयं की रहती है॥
शक्ति स्वभाव संभालस्वयं की लेलो निर्मल ज्ञानानंद।
सिद्ध स्वपद का दान प्राप्त कर प्राप्त करो ध्रुव परमानंद॥१॥

महिमावंत आत्मा दाता निज स्वपात्र को देता है।
पर से पल भर को न कभी यह लेश मात्र भी लेता है॥
ज्ञानानद स्वरूप आत्मा पात्र और दाता स्वयमेव।
निज अस्तित्व झूलने वाला संप्रदान निज हित अतएव॥२॥

त्रयकालों में जड़ जड़ रहता चेतन चेतन रहता है।
परिवर्तन होता न एक दूसरे रूप श्रुत कहता है॥
तीर्थंकर वाणी को लेने के उत्कृष्ट पात्र गणधर।
निज चैतन्य देव के गुण का पात्र स्वआत्मदेव सुखकर॥३॥

ज्यो मुट्ठी मे रखे स्वर्ण को भूल गया हो कोई भ्रान्त।
उसी भांति यह भूल स्वय को दुखी बन रहा घोर नितान्त॥
श्रद्धा गुण सम्यक्त्व दे रहा उसे ले रहा है आत्मा।
स्वयं बना है सप्रदान यह स्वयं बना है परमात्मा॥४॥

पर के कारण तू अशान्त है किन्तु शान्त रस से है पूर्ण।
समभावी समदृष्टि साम्य भावों से है तू ध्रुव आपूर्ण॥
दाता पात्र स्वयं ही तू निज सप्रदान बल के कारण।
साधक साध्य साधना साधन यही स्वयं भवदधि तारण॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
संप्रदान की महाशक्ति से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं संप्रदान शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

जो भव से भयभीत मोक्ष की अभिलाषा उसको होती।
जिनको भव से लेश न भय है उनकी ही दुर्गति होती॥

दोहा-संप्रदान की शक्ति से जीव स्वयं ही पात्र।
अपने को ही दे रहा अपना वैभव मात्र॥

❋ ❋ ❋

४५

उत्पाद व्ययालिंगित भावापायनिरपाय ध्रुवत्वमयी

पञ्चचत्वारिंशतिका-अपादान शक्तिः

सोरठा- *करती लाभ अरु हानि, आलिंगित उत्पाद व्यय।*
उपादान निज शक्ति, हानि कभी करती नहीं॥

छंद-ताटंग

अपादान की शक्ति सबल है व्यय उत्पाद ध्रुवत्व मयी।
निर्मल निर्मल कार्य कररहा नया नया सौन्दर्य मयी॥
निज चैतन्य रत्न की ध्रुव खानो में रत्न अनंतानंत।
रत्नत्रय द्वारा निकाल तू होगा त्रिभुवन पति भगवंत॥१॥

निज स्वभाव ही शरण जिसे है निज जीवंत आत्मा ध्रुव।
तन मन धन सुख दुख यौवन सब क्षण भंगुर है सदा अध्रुव॥
करते जो परमार्थ साधना अपरमार्थ का कर परिहार।
निश्चय भूत पदार्थ आत्मा में ही करते सतत विहार॥२॥

अमृत विन्दु पीते स्वभावमय सहज अमरता पाने को।
निर्ग्रंथेश बने हैं स्वामी सिद्ध स्वपद प्रगटाने को॥
बाह्य परिग्रह त्याग कर चुके अतरंग कर चुके विनाश।
अप्रमत्त बन झूल रहे हैं पाएँगे कैवल्य प्रकाश॥३॥

जिसे अनश्वर ध्रौव्य आत्म की श्रद्धा वह सुखही पाता।
निज एकत्त्व विभक्त स्वरूपी अपादान को ही ध्याता॥
सदा कार्य के होने में तो है निमित्त कारण असमर्थ।
उपादान ही सच्चा कारण एकमात्र है पूर्ण समर्थ॥४॥

शुद्ध त्रिकाली उपादान तो है सदैव तेरे ही पास।
क्यो निमित्त की ओर झांकता निज स्वरूप का कर विश्वास॥
ध्रुव स्वभाव कम कभी न होता ऐसी अपादान की शक्ति।
पर्याये क्षय होती रहती ऐसी वस्तु तत्व की व्यक्ति॥५॥

अरहंतो सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूं वसुयाम।
सिद्ध अनतानंत शक्ति सपन्न सभी को करूं प्रणाम॥
सैतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूं ध्येय में ले ध्रुव धाम।
निर्मल अपादान शक्ति से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं अपादान शक्ति मडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा- अपादान की शक्ति से लाभ हानि से दूर।
स्वय शक्ति सपन्न है निजानद भरपूर॥

❊ ❊ ❊

४६

भाव्यमान भावा धारत्व मयी षटचत्वारिंशतिका अधिकरण शक्तिः

सोरठा- *भाव्यभानमय भाव, काही जो आधार है।*
दिव्य अधिकरण शक्ति, सब जीवों के पास है॥

छंद-तारंक

है अधिकरण शक्ति माता ही चेतन का आधार स्वयं।
भाव्य मान भावना धार अधिकरण शक्ति निज श्रेष्ठ परम॥
आत्मा के समकित रूपी सुत का आधार आत्मा है।
रत्नत्रय का भाव धर्म है उससे ही परमात्मा है॥१॥

आत्म धर्म का मन वाणी तन राग लेश आधार नहीं।
आत्म स्वरूप शाश्वत ध्रुव मय इसमें रंच विकार नहीं॥

भेद ज्ञान विज्ञान शक्ति से जीव हुए है सिद्ध महंत।
होवे हैं होते आए है आगे भी होंगे भगवंत॥

यह अधिकरण शक्ति चेतन में भव्य त्रिकाल वर्तती है।
निज चेतन के गुण अक्रम हैं पर्यायें क्रमवर्ती हैं॥२॥

स्वानुभूति में ही उपयोग लगाने का उद्यम है श्रेष्ठ।
क्रियाकान्ड की ज्वालाएँ सब शुभ या अशुभ सर्व हैं नेष्ठ॥
कर्त्ता नहीं निमित्त कभी भी नहीं आत्मा का है कर्म।
साधन नहीं निमित्त कभी भी कभी न संप्रदान है धर्म॥

अपादान भी निमित्त नहीं है तथा अधिकरण कभी नहीं।
नैमितिक स्वय मेव आत्मा यह निमित्त पल मात्र नहीं॥
मात्र बाह्य में मान प्रतिष्ठा पाने का तू तज दे लोभ।
स्वतः प्रतिष्ठित निज में हो जा जीत अभी यह सारा क्षोभ॥४॥

क्षणिक विभाव तथा संयोग अभाव रूप हैं यह जानो।
आत्मा का स्वभाव त्रैकालिक शक्ति अनंतनंत मानो॥
चिदानंद ही परम शरण है समव शरण भी शरण नहीं।
आत्म स्वभावालंबन है तो जीव कभी बिन शरण नहीं॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
निज अधिकरण शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥

ॐ ह्रीं अधिकरण शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-भाव भाव मय शक्ति से सदाभाव अनुरूप।
लेश न कहीं अभाव है एकमात्र चिन्रूप॥

❀ ❀ ❀

भेद ज्ञान के ही अभाव से होते हैं कर्मों से बद्ध।
भेद ज्ञान के बिना कभी भी होता कोई नहीं अबद्ध॥

४७

स्वभाव मात्र स्वस्वामित्व मयी

सप्तचत्वारिंशतिका-संबंध शक्तिः

सोरठा- *निज स्वभाव स्वामित्व, अपने अपने पास है।*
संबंध मयी यह शक्ति, अद्भुत् अपरंपार है॥

वीरछंद

यह संबंध शक्ति बतलाती शुद्ध आत्मा एक अडोल।
गुण अनंत से संबंधित हो निज रस पी करती कल्लोल॥
स्व से है संबंध सदा ही पर से कुछ संबंध नहीं।
निज एकत्व विभक्त पने से शोभित है तो बंध नहीं॥१॥

एक शुद्ध है सदा अरूपी दर्शन ज्ञान मयी संम्यक्॥
परका तो परमाणु मात्र भी इस का कभी नहीं पल इक॥
यह अबद्ध अस्पृष्ट नियत अवशेष अनन्य अरूपी है।
ऐसे निज भावों की ही अनुभूति पूर्ण चिद्रूपी है॥२॥

चिदानंद लेने वाला है चिदानंद आत्मा दातार।
चिदानंद ही क्रिया कर्म है चिदानंद कर्त्ता शिवकार॥
चिदानद ही निश्चय आश्रय चिदानंद की शुद्धि अपार।
चिदानंद आधार स्वयं का चिदानंद संबंध उदार॥३॥

पर का स्वामी नहीं रंच भी अपना ही अधिपति सम्राट।
दस प्राणों के बिना जी रहा चेतन प्राणों से सुविराट॥
चैतन्या कृति भूल पराकृति हमको सुन्दर लगती है।
आत्माकृति ही शक्ति वती है ऐसी सुमति न जगती है॥४॥

तीन काल तीनों लोकों में सम्यकदर्शन सम्यकज्ञान।
निज सम्यक्चारित्र शक्ति स सबंधित ही कर आहुवान॥

चेतन के परिणाम कर्म आस्रव को करते है अवरुद्ध।
यही द्रव्य आस्रव का रुकना भाव द्रव्य संवर है शुद्ध॥

आत्मा का संबंध आत्मा से त्रैकालिक ध्रुव अविनाश।
पर से कुछ संबंध नहीं है निज से ही है कर विश्वास॥५॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
निज संबंध शक्ति के बल से पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥६॥
ॐ ह्रीं संबंध शक्ति मंडित श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं नि.।

दोहा-सहज शक्ति स्वामित्व ही निज ध्रुव से सबंध।
द्रव्य सदैव स्वतंत्र है नहीं कर्म से बंध॥

❋ ❋ ❋

पूर्णार्घ्य

सोरठा—शक्ति अनंत महान सब सिद्धों ने की प्रगट।
सैंतालीस प्रधान उनका ही वर्णन करूँ॥

छंद-पंचचामर

एक चैतन्य वस्तु मात्र त्रिकाली महान।
स्वानुभूति से सदैव भव्य है प्रकाशमान॥

शक्ति रूप मोक्ष शुद्ध पारिणामिक विशाल।
विद्यमान ध्रुव सदैव है अनाद्यनंत काल॥१॥

शुद्ध आनंदकंद एक परमात्मा
पूर्ण चैतन्य ज्योति ज्ञान सूर्य आत्मा॥
द्रव्य पर्याय गुण युक्त सत् महान है।
वीतराग देव श्रेष्ठ विश्व में प्रधान है॥२॥

जो गृहस्थ हैं किन्तु जानते हेयाहेय पदार्थ सकल।
वे ही एकदिवस पाते हैं शुद्ध मोक्ष का सुख अविकल॥

सदा जीवत्व शक्ति से प्रकाशमान है।
पुंज चिति शक्ति का महान सौख्य वान है॥
दृशि शक्ति से सदैव ओत प्रोत निज प्रदेश।
सहज दर्शनमयी अनाद्य नत है हमेश॥३॥

ज्ञान शक्ति ज्ञान मय अनादि है अनंत है।
सौख्य शक्ति सुखमयी सदैव ही महंत है॥
वीर्य शक्ति का अनंत सिंधु है प्रसिद्ध है।
प्रभुत्व शक्ति से महान लोकपति सिद्ध है॥४॥

विभुत्व शक्ति का समुद्र पूर्ण विभुवंत है।
पूर्ण दैदीप्यमान शुद्ध भगवंत है॥
सर्वदर्शित्व शक्ति देखती त्रिलोक को।
सर्वज्ञ शक्ति जान रही लोक अलोक को॥५॥

स्वच्छत्व शक्ति धवल प्रांजल्य है महान।
है प्रकाश शक्ति भी प्रकाशमय उदीयमान॥
असंकुचित विकास शक्ति अमर्यादित त्रिकाल।
अकार्य कारण स्व शक्ति त्रिकाली महाविशाल॥६॥

शक्ति परिणम्य परिणामकत्व जानिये।
त्याग उपादान शून्यत्व शक्ति मानिये॥
शक्ति अगुरुलघुत्व की स्वयं जगत प्रसिद्ध है।
उत्पाद व्यय ध्रुवत्व शक्ति स्वयं सिद्ध है॥७॥

परिणाम शक्ति का मिला न कभी पार है।
अमूर्तत्व शक्ति में कहीं न कुछ विकार है॥
अकर्तृत्व शक्ति से जीव अकर्त्ता स्वभाव।
अभोक्तृत्व शक्ति से जीव अभोक्ता स्वभाव॥८॥

पुद्गलकाय सदैव अचेतन तू चैतन्य शुद्ध भगवान।
पंच द्रव्य जड़ से पूरा ही भिन्न द्रव्य चैतन्य महान॥

निष्क्रियत्व शक्ति से जीव अचल है अडोल।
नियत प्रदेशत्व शक्ति से प्रदेश हैं अलोल॥
स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति धर्ममयी जयस्वरूप।
साधारण असाधारण धर्मत्व शक्ति रूप॥९॥

अनंत धर्मत्व शक्ति पूर्ण धर्म वंत है।
विरुद्ध धर्मत्व शक्ति चिर प्रकाश मंत है॥
तत्त्व शक्ति आत्म तत्व को सदा पिछानती।
अतत्व शक्ति ज्ञानमयी भावना को जानती॥१०॥

एक एकत्व शक्ति सकल जग निहारती।
अनेकत्व शक्ति अनेकान्त को जुहारती॥
भाव शक्ति भावमयी भाव से सुपूर्ण है।
अभाव शक्ति परविभाव कर रही विचूर्ण है॥११॥

भावाभाव शक्ति भाव से प्रकट सदैव है।
अभावभाव शक्ति भी समर्थ है तथैवहै॥
भावभाव शक्ति अनुसार परिणमन स्वतंत्र।
अभाव अभाव शक्ति भी स्वतंत्र है न परतंत्र॥१२॥

भाव शक्ति अनुसार निज भवन मनोज्ञ है।
मात्र शुद्ध भाव को नमन सदैव योग्य है॥
क्रिया शक्ति एकमात्र ज्ञानमयी तंत्र है।
कर्म शक्ति भी स्वकर्म कर रही स्वतंत्र है॥१३॥

कर्तृत्व शक्ति से स्वभाव शोभायमान।
करण शक्ति शुद्ध आधार है स्वरूपवान॥
संप्रदान शक्ति ही स्वयं स्वतः श्रृंगार है।
अपादान शक्ति स्वयं में भरी अपार है॥१४॥

अधिकरण शक्ति एक मात्र आधार है।
संबंध शक्ति स्वयं में भरी उदार है॥

हिंसा का सम्पूर्ण अभाव यही उत्तम संयम सुप्रसिद्ध।
इसका पालन करके ही ऋषि मुनिवर हो जाते हैं सिद्ध।

शक्तियों की व्यक्ति कर हुए अनंतनंत सिद्ध।
पूर्ण अर्घ्य है समर्पयामि भावमय प्रसिद्ध॥१५॥
आपके समान सर्व शक्तियो की व्यक्ति कर।
सिद्ध पद प्राप्त करूँ आप की ही भक्तिकर॥

ॐ ह्रीं अनतानत शक्ति समन्वित जीवत्व आदि संबंध शक्ति युक्त सैंतालीस शक्ति मडित श्री सर्व सिद्ध परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।

❋ ❋ ❋

जयमाला

दोहा-शुद्ध आत्म वैभव प्रभो उत्तम महा महान।
शक्ति अनंतानंत युत चेतन द्रव्य प्रधान॥

वीरछंद

प्रभोआत्म वैभव महान का जिन शासन में श्रेष्ठ महत्व।
सैतालीस, शक्ति का वर्णन सुनकर जागा हृदय समत्व॥
शक्ति अनतानत युक्त हूँ परम आत्म वैभवधारी।
मुख्य शक्तियाँ सैतालीस हृदय को भायीं अविकारी॥१॥

एक एक का परिचय पाकर हुआ उल्लसित हृदय कमल।
चिरमिथ्यात्व भगा तत्क्षण ही पाते ही समकित उज्ज्वल॥
राग आत्मा मे न कहीं है नहीं राग में है आत्मा।
वीतराग है निर्विकार है अपना कारण परमात्मा॥२॥

आत्म द्रव्य तो स्वयं सिद्ध है इसका है परिणमन स्वतंत्र।
शरीरादि की क्रिया तथा जड़तन भी लेश नहीं परतंत्र॥
अहंकार ममकार बुद्धि कर्तृत्व और भोक्तृत्व विभाव।
कर्मबध के मुख्य हेतु हैं जीव अबंधक शुद्ध स्वभाव॥३॥

मोक्षमार्ग का साधन अपना शुद्ध आत्मा त्रैकालिक।
यह साध्य है यही साधना साधक है प्रभुस्वाभाविक॥

दृष्टिवंत नासाग्र बन अभी देख अदेही निज भगवान।
जननी क्षीर न कभी पियेगा नहीं जन्म होगा फिर मान॥

जब स्वभाव सन्मुख होता तब तब आनंद धार बहती।
संयोगों से सदा पृथक रह असंयोगि बनकर रहती॥४॥
आकुलत्व की पवन रहित है श्रद्धा ज्ञान मयी आनंद।
ज्ञान समर्पयामि कहते ही हो जाता है शिव सुख कंद॥
जिन वचनों को जिसने भी कर लिया ग्रहण वह शुद्ध हुआ।
निज स्वभाव के हुआ स्वसन्मुख नित्यनिरंजन सिद्ध हुआ॥५॥

मिथ्या भ्रम के पूर्वाग्रह से ग्रसित विवेक हीन जो जीव।
मोहमयी मदिरा पी निज को भूले पाते कष्ट सदीव॥
अगर पुण्य को पुण्य जानता है तो सच्चा सम्यक्‌दृष्टि।
अगर पुण्य को धर्म मानता है तो पक्का मिथ्यादृष्टि॥६॥

आस्रव को संवर मत समझो सवर को आस्रव न कभी।
पाप पुण्य आस्रव के सुत हैं धर्म रंच होते न कभी॥
लाखों गाथाएँ शोभित हैं कंठमाल मे फिर भी मूढ़।
स्वपर ज्ञान बिन समझ न पाएगा आगम का रहस्य गूढ़॥७॥

चार भाव से रहित पारिणामिक स्वभाव ही भाव महान।
इसका ही आश्रय लेने से होता भव्य मोक्ष कल्याण॥
पर का ग्रहण नहीं है इसमें पर का त्याग नहीं किंचित।
धर्म स्वभाव दृष्टि में आते ही है सिद्ध स्वपद निश्चित॥८॥

शक्ति अनंतानंत उछलतीं जहाँ राग का हुआ अभाव।
सैंतालीस शक्तियाँ मुखरित होतीं जब जगता निजभाव॥
आत्म स्वरूपामृत की धारा में अवगाहन अमृतमयी।
कर्माकृति को आत्माकृति से जय करता त्रैलोक्य जयी॥९॥

जो कषाय से अनुरंजित हैं वे लेश्याओं से रंजित।
जिसने भी जीता कषाय को वह शिव सुख से अनुरंजित॥
जब तक जिय रंजायमान है विषय कषायों के ऊपर।
लेश्याओं से कभी न पीछा छूटेगा यह निश्चयकर॥१०॥

अविरति अरुमिथ्यात्व मिटाया पर न मिटाया कभी प्रमाद।
पंच प्रमादों के कुचक्र में फँसा रहा भ्रम से अविवाद॥
कर्मों के रजकण को धोने का पुरुषार्थ न किया कभी।
कर्म रहित हो पल भर को भी सुख से पूर्ण जिया न कभी॥११॥

जिनवर मंदिर में विराजते कहते हैं संसारी जीव।
ज्ञानी कहते तन मंदिर में ही विराजने नाथ सदीव॥
ध्रुवस्वभाव से प्रथक वृत्ति का नाम नहीं ऐसी आत्मा।
जिसे आत्मा क्षणिक भासती वह सदैव ही बहिरात्मा॥१२॥

क्रिया काल के कोलाहल से सर्व वृद्धि हो गई समाप्त।
अनायास अब धर्म क्रिया की ध्वनि हो गई हृदय मे व्याप्त॥
पुण्योदय हो या पापोदय दोनों में हो समता भाव।
संवर भावों से कर डालूगा मैं नूतन बंध अभाव॥१३॥

योगो का अभाव करके मैं बनूं अयोगी सिद्ध महंत।
सिद्धशिला पर सदा विराजूं पाऊँ सिद्ध स्वपद भगवंत॥
सर्व शक्तियाँ मेरे भीतर भरी हुई हैं महिमावान।
इन्हें प्रगट करने का ही पुरुषार्थ सफल करलूं भगवान॥१४॥

इन्द्रिय ज्ञान न कभी ज्ञान है आत्म ज्ञान ही सच्चा ज्ञान।
आत्म ज्ञान के बल से प्राणी पा लेता है पद निर्वाण॥
सैंतालीस नयों के द्वारा करूँ आत्मा का ही ज्ञान।
आत्मज्ञान मय वीतराग विज्ञान प्राप्त कर बनूं महान॥१५॥

ध्येय बनाऊँ शुद्धातम को करूँ ध्यान अविकल्प स्वरूप।
प्रगट करूँ शक्तियाँ सर्व ही निजस्वरूप के ही अनुरूप॥
अपने प्रतिपक्षी कर्मों को जय कर करूँ आत्म कल्याण।
निज चैतन्य राज के बल से पाऊँ निज चैतन्य निधान॥१६॥

शुद्ध आत्मा के अनुभव का फल है केवल ज्ञान प्रसिद्ध।
इस फल के खाने से अक्षय पद मिल जाता होता सिद्ध॥

पंच समिति त्रय गुप्ति अष्ट प्रवचन मातृका हृदय धारूँ।
सर्व शक्तियों का प्रयोग कर भव समुद्र दुख निरवारूँ॥
महाअर्घ्य यह करूँ समर्पित भक्ति भाव से त्रिभुवन नाथ।
आप कृपा से आत्मशक्ति द्वारा मै भी प्रभु बनूँ सनाथ॥१७॥

भ्रमा लाख चौरासि योनि में भिन्न भिन्न पायी पर्याय।
सम्यक्दर्शन कभी न पाया नही प्राप्ति का किया उपाय॥
शक्ति अनंतानत प्रगट करने की शक्ति प्रदान करो।
श्रेष्ठ आत्म वैभव की गरिमा दो मेरा कल्याण करो॥१८॥

अरहंतों सर्वज्ञों को मैं विनय सहित वन्दूँ वसुयाम।
सिद्ध अनंतानंत शक्ति संपन्न सभी को करूँ प्रणाम॥
सैंतालीस शक्तियाँ प्रगटित करूँ ध्येय में ले ध्रुव धाम।
निहित शक्तियाँ प्रगट करूँ मैं पाऊँ शिवपुर में विश्राम॥१९॥

ॐ ह्री अनतानत शक्ति समन्वित सैंतालीस शक्ति मडित श्री सर्व सिद्ध परमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा।

इस विधान का सम्यक्फल है प्रगट करूँ निज शक्ति महान।
रागद्वेष परिणति अभाव कर करूँ आत्मा का ही ध्यान॥
लौकिक सहित अलौकिक शाश्वत सुख की हो जाती है प्राप्ति।
सादि अनंत सौख्य मय सारी विभुता की होती है व्याप्ति॥१॥

यह विधान कर मैने जाना आत्म स्वभाव परम बलवान।
सैंतालीस शक्तियों का भी ज्ञान हुआ मुझको भगवान॥
भव समुद्र स्वयमेव विलय हो जाता है मिलता निर्वाण।
वीतराग पद पाने का है जग में केवल यही विधान॥२॥

इत्याशीर्वादः

जाप्यमंत्र-ॐ ह्रीं अनंतानंत शक्ति संपन्न श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्योनमः

❀ ❀ ❀

जो परभावो को तज देते ज्ञायक की महिमा पहचान।
लोकालोक जानते युगपत पाते निर्मल केवल ज्ञान।

शान्ति पाठ

छंद-गीतिका

शक्तियो का ज्ञान करने को किया है यह विधान।
आज तक निज शक्तियो के ज्ञान से था मैं अजान॥
शक्तियो का ज्ञान कर चिरशान्ति पाऊँ हे प्रभो।
भान कर निज शक्ति का निज आत्मा ध्याऊँ विभो॥

विश्व भर मै शान्ति हो प्रभु नही हो कोई दुखी।
नही अल्प अशान्ति हो प्रभु सभी प्राणी हो सुखी॥
परम शान्त स्वरूप मेरा सहज सुख परिपूर्ण है।
शान्त रस का है समुद्र सदैव सुख आपूर्ण है॥२॥

इसे पाने के लिए आया तुम्हारे द्वार पर।
मुक्ति के पथ पर बढूँगा आत्म शक्ति विचार कर॥
परम शान्ति प्रदान करने मे समर्थ महा प्रभो।
महा मगल मूर्त्ति जय कल्याण कारी हे विभो॥३॥

❋ ❋ ❋

क्षमापना

वीरछंद

यदि प्रमाद वश भूल हुई हो उनको क्षमा करो भगवान।
शरणगत को शरण रखो दो भेद ज्ञान विज्ञान महान॥
सकल जगत मे पूर्ण शान्ति हो शासन हो धार्मिक बलवान।
परम शान्ति हो परम शान्ति हो परमशान्ति हो हे भगवान॥

❋ ❋ ❋

बनवासी हो या गृहवासी करते हों निज में ही वास।
शीघ्र परम सुख को पाते हैं पाते शाश्वत मुक्ति निवास॥

१२५

ध्यान सूत्र

नित्य पठनीय श्रवणीय मननीय चिंतनीय आचरणीय

सिद्धों के सम नित्य निरंजन मेरी आत्मा सिद्धस्वरूप॥१॥
सिद्धों के सम मेरी आत्मा सदा शुद्ध कृतकृत्यस्वरूप॥२॥
तीर्थंकर सम पंच महाकल्याणांकित है मेरा रूप॥३॥
अरहंतों सम मेरी आत्मा परम अनंत चतुष्टयरूप॥४॥
अरहंतों सम है अनंत अतिशय से शोभित मेरा रूप॥५॥
सिद्धों सम शुद्ध आत्मा मेरी स्वात्मोपलब्धि स्वरूप॥६॥
सिद्धों सम क्षायिक सम्यक दर्शन मय हूँ कैवल्यस्वरूप॥७॥
सिद्धों सम है मेरी आत्मा पूर्ण शुद्ध सुस्मरण स्वरूप॥८॥
सिद्धों के सम मैं भी हूँ कैवल्य ज्ञानमय शिव सुखरूप॥९॥
सिद्धों के सम द्रव्य भाव नो कर्म रहित है मेरा रूप॥१०॥
सिद्धों सम मैं एक अखंड मूर्त हूँ परम शुद्ध शिवरूप॥११॥
सिद्धों के सम कर्म रहित हूँ परमात्मा ध्रुव आत्म स्वरूप॥१२॥
सिद्धों सम कैवल्य ज्ञान उत्पत्ति स्वकारण हूँ अनुरूप॥१३॥
करुणामय अरहंतों की दिव्य ध्वनिसम दिव्यध्वनिरूप॥१४॥
मैं भी स्वपर प्रकाशक केवल ज्ञान सूर्य हूँ प्रकाशरूप॥१५॥
चार महामंगल सम मैं भी मंगल मय हूँ मंगलरूप॥१६॥
सर्वोत्तम चारों पदार्थ सम मैं भी हूँ परमार्थ स्वरूप॥१७॥
हूँ अरहंत सिद्ध साधु जिन धर्म शरण सम शरण स्वरूप॥१८॥
सहज शुद्ध स्वाभाविक ज्ञानानंदी हूँ आनंद स्वरूप॥१९॥

सर्व क्रियाओं से विरहित टंकोत्कीर्ण ध्रुव ज्ञायक रूप॥२०॥
परमौदारिक दिव्य शरीरी कोटि सूर्य प्रभसमनिंजरूप॥२१॥
सकल ज्ञेय ज्ञायक सिद्धो सम मैं हूँ पुरूषाकार स्वरूप॥२२॥
रागादिक लेपो से विरहित निरुपम हूँ निर्लेप स्वरूप॥२३॥
सिद्धो के सम परम देह से किंचित्न्यून शुद्धमयरूप॥२४॥
सिद्धो सम शत इन्द्रों द्वारा वंदित मैं भी सिद्ध स्वरूप॥२५॥
अरहंतों सम चौंतीसों अतिशय से शोभित शुद्ध स्वरूप॥२६॥
अरहंतो सिद्धों के सम मैं भी हूँ परम पवित्र अनूप॥२७॥
शुद्ध आत्मा परमानंद स्वरूपी सहजानंद स्वरूप॥२८॥
सिद्धो के सम जन्म जराअरु मरण रोग से रहित अरूप॥२९॥
सिद्धो के सम परमानंद मयी हूँ मैं भी शिव सुखरूप॥३०॥
अरहंतो सम अष्ट प्रतिहार्यों से शोभित पूर्ण स्वरूप॥३१॥
पर से भिन्न अभेद स्वयं से निश्चित श्रद्धानंद स्वरूप॥३२॥
सार भूत उत्तम पदार्थ हूँ रत्नत्रय स्वरूप गुणभूप॥३३॥
सिद्धों के सम परम स्वस्थ हूँ त्रिविध ताप से रहित अनूप॥३४॥
सिद्धों सम परम अनंत चतुष्टय मय भूतार्थ स्वरूप॥३५॥
सिद्धों के सम परम स्वसंवेदनमय है मेरा आत्म स्वरूप॥३६॥
जड़ तन से सर्वथा भिन्न हूँ परम भेद विज्ञान स्वरूप॥३७॥
ज्ञानावरणादिक आठों कर्मों से रहित सदा मम रूप॥३८॥
सिद्धों के सम मैं भी हूँ लोकाग्रनिवासी शुद्धस्वरूप॥३९॥
सिद्धों सम चैतन्य कला भूषित मैं हूँ चित्कला स्वरूप॥४०॥
सिद्धों के सम अष्ट आत्म गुण से मंडित मम शुद्ध स्वरूप॥४१॥

कोई कभी नहीं मरता है नहीं किसी का होता नाश।
निज अस्तित्व स्वगुण केवल से तू है अजर अमर अविनाश॥

सिद्धो के सम विद्यमान हूँ शाश्वत ध्रुव त्रैकालिक रूप॥४२॥
शुद्ध आत्मा के अनंत चिन्हों से भूषित मैं चिद्रूप॥४३॥
शुद्ध आत्मा समय सार है मैं भी समय सार अनुरूप॥४४॥
सिद्धों सम स्वात्मानुभूतिमय मैं भी हूँ अनुभव रस कूप॥४५॥
सिद्धों के सम देह चेतना मयी शुद्ध चैतन्य स्वरूप॥४६॥
सिद्ध स्वयंभू उनसमकर्म रहित हूँ परम स्वयंभू रूप॥४७॥
केवल दर्शनमयी सिद्धसम मैं भी केवल दर्शन रूप॥४८॥
सिद्धों के सम अनंत अतिशय धारी उत्तम अतिशयरूप॥४९॥
सिद्धों सम मैं सदा अचल हूँ अविचल चिदानंद चिद्रूप॥५०॥
अरहंतों सम गुण अचिन्त्य से शोभित मैं अरहंत स्वरूप॥५१॥
अरहंतों सम घाति कर्म के चतुष्क से विरहित निजरूप॥५२॥
अरहंतो के सम त्रिभुवन का गुरु हूँ केवल ज्ञानस्वरूप॥५३॥
अरहंतों सम अष्टादश दोषों से रहित शुद्ध निजरूप॥५४॥
सिद्धों सम निर्गति रूपी चारों गतियों से रहित अनूप॥५५॥
सिद्धों के सम मैं भी हूँ त्रैलोक्यपूज्य परमात्मस्वरूप॥५६॥
सिद्धों के सम लोक शिखर का भव्य निवासी मैं चिन्रूप॥५७॥
सिद्धों के सम तीन लोक से वन्दनीय हूँ बुद्ध स्वरूप॥५८॥
सिद्धों के सम ज्ञानरूप जल से पूरित ज्ञानार्णवरूप॥५९॥
सिद्धों सम मैं भी गतिगति के परिभ्रमण से रहित अनूप॥६०॥
सिद्धों के सम ध्रौव्य त्रिकाली मात्र शुद्ध चैतन्य स्वरूप॥६१॥
सिद्धों के सम सकल व्यग्रता से विहीन सुख शान्ति स्वरूप॥६२॥
अरहंतों सम राग द्वेष से रहित वीतरागी निज रूप॥६३॥

तू चलते फिरते मुरदे के संग व्यर्थ में भटक रहा।
इसमें ही मूर्छित होकर तू जिय अनादि से अटक रहा॥

अरहंतो सिद्धो के सम हूँ मै क्षायिक सम्यक्त्वस्वरूप॥६४॥
आचार्यों सम शुद्ध त्रयोदशविध चारित्राचारस्वरूप॥६५॥
आचार्यों समनिर्मल पच प्रकारी वीर्याचार स्वरूप॥६६॥
सिद्धो सम हूँ समता रस परिपूर्ण समरसिक एक स्वरूप॥६७॥
तर्क विर्तक रहित सिद्धो सम स्व गुण अनत अतर्क्य स्वरूप॥६८॥
सिद्धो समकर्मांजनविरहित शाश्वत नित्य निरजन रूप॥६९॥
सिद्धो सम जीवत स्वरूपी अतत्व विरहित तत्व स्वरूप॥७०॥
सिद्धो के सम शुद्ध आत्मा क्षायिक दर्शन ज्ञान स्वरूप॥७१॥
सिद्धो के सम आयुकर्म से रहित शुद्ध अवगाहन रूप॥७२॥
रागद्वेष आदिक विभाव परिणाम शून्य अविकल्पस्वरूप॥७३॥
सिद्धो सम रत्नत्रय अधिपति गुण अनत रत्नाकररूप॥७४॥
सिद्धो सम अनत गुण सागर ध्रुव चैतन्य पुज निज रूप॥७५॥
सिद्धो के सम सदानद मय परमोत्कृष्ट शुद्ध निजरूप॥७६॥
सिद्धो के सम शक्ति अनतानतो का स्वामी निजरूप॥७७॥
सिद्धो के सम नाम कर्म क्षय से हूँ परम सूक्ष्म चिद्रूप॥७८॥
सिद्धो सम मै शुद्ध बुद्ध चैतन्य कल्पतरु फल शिवरूप॥७९॥
वेदनीय क्षय से सिद्धो सम उज्ज्वल अव्याबाध स्वरूप॥८०॥
सिद्धो के सम गोत्र कर्म से रहित अगुरु लघुत्व स्वरूप॥८१॥
सिद्धो के सम पचेन्द्रिय से रहित निरिन्द्रिय मेरा रूप॥८२॥
सिद्धो सम मै मोह रहित सर्वथा परम निर्मोह स्वरूप॥८३॥
अरहंतो सम निर्विकल्पहूँ अविकल्पी आनद स्वरूप॥८४॥
अरहतो सम मुझमे भी है नव केवल लब्धियां अनूप॥८५॥
आचार्यो सम आत्मानदी निश्चय पचाचार स्वरूप॥८६॥
आचार्यो सम सप्त भयो से रहित सदा हूँ निर्भयरूप॥८७॥
सिद्धो सम केवल ज्ञानादिक गुण पति सकल विमलनिजरूप॥८८॥

सर्वविशुद्ध ज्ञान के भीतर जब प्रवेश हो जाता है।
इसी युक्ति से साक्षात् निज मुक्ति स्व पर मिल जाता है॥

सिद्धों के सम मन वच कायत्रियोग रहित निज आत्म स्वरूप।८९॥
सिद्धों के सम अर्ध्व स्वभावी त्रिलोकाग्रपति चिन्मय रूप॥९०॥
सिद्धों के सम गुण अनंत का स्वामी शुद्ध अचिन्त्य स्वरूप॥९१॥
मै ही हूँ परमार्थ स्वरूपी त्रिभुवन पति परमार्थ अनूप॥९२॥
सिद्धों सम केवल दर्शन केवल ज्ञानी हूँ ज्योतिस्वरूप॥९३॥
सिद्धों के सम अष्ट स्वगुण से मंडित विशिष्टाष्ट गुण रूप॥९४॥
सिद्धों के सम अंतरंग रत्नत्रय मेरा विमल स्वरूप॥९५॥
मैं ही परम सत्य शिव सुन्दर हूँ अनुपम सत्यार्थ स्वरूप॥९६॥
मैं निश्चय भूतार्थ तत्व हूँ एकमात्र भूतार्थ स्वरूप॥९७॥
अरहंतों सिद्धों के सम हूँ मैं क्षायिक चरित्र स्वरूप॥९८॥
आचार्यों सम निश्चय षड आवश्यक मेरा निश्चय रूप॥९९॥
आचार्यों सम सदा जागृत निश्चय पंचाचार स्वरूप॥१००॥
आचार्यों सम अष्ट सुविध दर्शन आचार स्वरूप अनूप॥१०१॥
मैं भी परम शुक्ल ध्यानमय उज्ज्वल परम समाधिस्वरूप॥१०२॥
आचार्यों सम मैं भी हूँ द्वादश विधि तप आचार स्वरूप॥१०३॥
जिस प्रकार सिद्धों की आत्मा मैं भी वैसा आत्म स्वरूप॥१०४॥
सिद्धों सम जीवत्व भावमय मैं हूँ पंचम भाव स्वरूप॥१०५॥
स्त्री पुरुष नपुंसक वेदों से विरहित निर्वेद स्वरूप॥१०६॥
जीव द्रव्य सम शुद्ध स्वरूपी जीवद्रव्य मैं शुद्ध स्वरूप॥१०७॥
सिद्धों के सम परमानंदी परम वीतरागी निजरूप॥१०८॥
निर्विकल्प हूँ अविकल्पी हूँ मात्र स्वसंवेदन मयी अनूप॥१०९॥
मैं अभेद रत्नत्रय स्वामी परमध्यान पति ध्यान स्वरूप॥११०॥
ज्ञान स्वभाव भूत लक्षण से मैं सदैव ही ज्ञान स्वरूप॥१११॥
सब व्यवहार भेद से विरहित मैं हूँ निश्चय धर्म स्वरूप॥११२॥

नय के जंगल मे मत भटको नयातीत हो चले चलो।
एक आत्मा के आश्रित हो पर भावों को चले चलो॥

ज्ञान मात्र से लोकालोक जानने वाला ज्ञान स्वरूप॥११३॥
दर्शन गुण से लोकालोक देखने वाला दर्शन रूप॥११४॥
त्रिविध कर्म मल रहित सर्वथा शुद्ध बुद्ध ज्ञानी का रूप॥११५॥
अरहंतो सम दर्शन ज्ञान अनंत वीर्य सुख मंडित रूप॥११६॥
सिद्धो सम हूं शक्ति अनंतानंत विभूषित त्रिभुवन भूप।॥११७॥
आचार्यों सम निश्चय गुण छत्तीसविभूषित मेरा रूप॥११८॥
उपाध्याय सम मेरी आत्मा द्वादशांगवाणी अनुरूप॥११९॥
साधु समान आत्मा मेरी वसु प्रवचन मातृका स्वरूप॥१२०॥
मगलोत्तम शरण भूत मेरी आत्मा है सहज स्वरूप॥१२१॥
पाँचो परमेष्ठी सम मेरी आत्मा है परमेष्ठि स्वरूप॥१२२॥
तीर्थों के सम महातीर्थ है मेरी आत्मा तीर्थ स्वरूप॥१२३॥
सिद्धो सम टकोत्कीर्ण निष्क्रिय ज्ञायक चिद्रूप अनूप॥१२४॥
अरहंतो सम कोट्यादित्य प्रभासम परमौदारिक रूप॥१२५॥

ध्यान सूत्र का पठन श्रवण अध्ययन चिंतवन मनन प्रसिद्ध।
निज से एकाकार प्राप्त कर हो जाते है प्राणी सिद्ध॥
काल भेद तज जो भी इसका करते हैं चिन्तवन मनन।
सर्व आत्म शक्तियाँ प्रगट कर पालेते हैं मुक्ति गगन॥

नोट- अपनी आत्म शान्ति की प्राप्ति के लिए प्रतिदिन मनोयोग पूर्वक ध्यान सूत्र का पूरा या आंशिक पाठ पढ़ें, सुनें विचारें।
अवकाश के क्षणो मे कोई भी एक सूत्र का बारबार मनन करे। सासारिक समस्त प्रकार के क्लेशो से चिन्ताओ से मुक्त होंगे। समता रस के अभिषेक से निर्मलता प्रगट होगी।

श्री पंचपरमेष्ठी पूजन

अरहंत, सिद्ध, आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारणहार नमन॥
मन वच काया पूर्वक करता हूं शुद्ध हृदय से आहुवानन।
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ सन्निकट होउ मेरे भगवन् ॥
निज आत्म तत्व की प्राप्ति हेतु ले अष्ट द्रव्य करता पूजन।
तुव चरणों की पूजन से प्रभु निज सिद्ध रूप का हो दर्शन॥

ॐ ह्री श्री अरहंत सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु पंच परमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर सवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ- अत्र मम सन्निहितौं भव भव वषट्।

मैं तो अनादि से रोगी हूं उपचार कराने आया हूं।
तुमसम उज्ज्जवलता पाने को उज्ज्वल जल भरकर लाया हूं॥
मैं जन्म जरा मृत्यु नाश करूं ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्री श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

संसार ताप से जल-जल कर मैंने अगणित दुख पाये हैं।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया पर के ही गीत सुहाये हैं॥
शीतल चन्दन है भेंट तुम्हें संसार ताप नाशो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिनेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

दुखमय अथाह भव सागर में मेरी यह नौका भटक रही।
शुभ अशुभ भाव की भंवरों में चैतन्य शक्ति निज अटक रही।
तंदुल हैं धवल तुम्हें अर्पित अक्षयपद प्राप्त करूं स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि.।

भेद ज्ञान के ही अभाव से होते हैं कर्मों से बद्ध।
भेद ज्ञान के बिना कभी भी होता कोई नहीं अबद्ध॥

मैं काम व्यथा से घायल हूं सुख की न मिली किंचित् छाया।
चरणों में पुष्प चढ़ाता हूं तुमको पाकर मन हर्षाया॥
मैं काम भाव विध्वंस करूं ऐसा दो शील हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्री श्री पचपरमेष्ठिभ्यो कामबाण विध्वसनाय पुष्प नि.।

मै क्षुधा रोग से व्याकुल हू चारो गति में भरमाया हूं।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी तृप्त नहीं हो पाया हू॥
नैवेद्य समर्पित करता हूं यह क्षुधारोग मेटो स्वामी।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्री श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि.।

मोहान्ध महाअज्ञानी मै निज को पर का कर्ता माना।
मिथ्यातम के कारण मैने निज आत्म स्वरूप न पहचाना॥
मैं दीप समर्पण करता हू मोहान्धकार क्षय हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्री श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि.।

कर्मों की ज्वाला धधक रही संसार बढ़ रहा है प्रतिपल।
संवर से आश्रव को रोकूं निर्जरा सुरभि महके पल-पल॥
मैं धूप चढ़ाकर अब आठो कर्मों का हनन करूं स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूप नि.।

निज आत्मतत्त्व का मनन करूं चिंतवन करूं निजचेतन का।
दो श्रद्धा, ज्ञान, चरित्र श्रेष्ठ सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का॥
उत्तमफल चरण चढ़ाता हूं निर्वाण महाफल हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

सब प्रकार की बाधाओं से मुक्त सर्व संयोग रहित।
वीत राग जिनदेव भावना ही सर्वज्ञ स्वभाव सहित॥

जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प दीप, नैवेद्य, धूप, फल लया हूं।
अब तक के संचित कर्मों का मैं पुंज जलाने आया हू॥
यह अर्घ समर्पित करता हूं अविचल अनर्घपद दो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

***

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो निज ध्यान लीन गुणमय अपार।
अष्टादश दोष रहित जिनवर अरहन्त देव को नमस्कार।१।
अविचल अविकारी अविनाशी निज रूप निरंजन निराकार।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत भगवन्त सिद्ध को नमस्कार।२।
छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित निश्चय रत्नत्रय हृदय धार।
हे मुक्ति वधू के अनुरागी आचार्य सुगुरू को नमस्कार।३।
एकादश अंग पूर्व चौदह के पाठी गुण पच्चीस धार।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान श्री उपाध्याय को नमस्कार।४।
व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म वैराग्य भावना हृदय धार।
हे द्रव्य भाव संयममय मुनिवर सर्वसाधु को नमस्कार।५।
बहुपुण्य संयोग मिला नरतन जिनश्रुत जिनदेव चरणदर्शन।
हो सम्यक्दर्शन प्राप्त मुझे तो सफल बने मानव जीवन।६।
निज पर का भेद जानकर मैं निज को ही निज में लीन करूं।
अब भेद ज्ञान के द्वारा मैं निज आत्म स्वय स्वाधीन करूं।७।
निज में रत्नत्रय धारण कर निज परिणति को ही पहचानूं।
पर परणति से हो विमुख सदा निजज्ञान तत्व को ही जानूं।८।
जब ज्ञान ज्ञेयज्ञाता विकल्प तज शुक्ल ध्यान मैं ध्याऊंगा।

ध्यान हीन को कभी न हो सकता निज परमात्मा दर्शन।
है अध्यात्म कला विहीन तो उसको है मिथ्यादर्शन॥

तब चार घातिया क्षय करके अरहंत महापद पाऊंगा।९।
है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा हे प्रभु कब इसको पाऊंगा।
सम्यक् पूजा फल पाने को अब निजस्वभाव में आऊंगा।१०।
अपने स्वरूप को प्राप्ति हेतु हे प्रभु मैंने की है पूजन।
तब तक चरणों मे ध्यान रहे जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन।११।
ॐ ह्री श्री अर्हंतादि पच परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
हे मगल रूप अमगल हर मगलमय मंगल गान करूं।
मगल मे प्रथम श्रेष्ठ मंगल नवकारमन्त्र का ध्यान करू।१२।

इत्याशीर्वाद

जाप्यमत्र—ॐ ह्री श्री अ सि आ उ सा नमः।

***

श्री वर्तमान चौबीस तीर्थंकर पूजन

भरतक्षेत्र की वर्तमान जिन चौबीसी को करूँ नमन।
वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर के पद पकज में वन्दन॥
भक्ति भाव से नमस्कार कर विनय सहित करता पूजन।
भव सागर से पार करो प्रभु यही प्रार्थना है भगवन॥

ॐ ह्री श्री वृषभादिक महावीर पर्यन्त चतुर्विंशति जिन समूह अत्र अवतर-अवतर सवौषट्, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः, अत्रमम् सन्निहितो भव-भव वषट्।

आत्मज्ञान वैभव के जल से यह भव तृषा बुझाऊंगा।
जन्मजरा हर चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जगाऊंगा॥
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर के नित चरण पखारूंगा।
पर द्रव्यों से दृष्टि हटाकर अपनी ओर निहारूंगा॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरातेभ्योजन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

गंभीर रहस्य जानने का उत्तम उपाय तू ज्ञाता बन।
चैतन्य चमत्कारी हीरा प्रति समय निरख तू दृष्टा बन॥

आत्मज्ञान वैभव के चन्दन से भवताप नशाऊंगा।
भव बाधा हर चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जलाऊंगा॥वृष.॥
ॐ ह्री श्री वृषभादि वीरांतेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदन नि।

आत्मज्ञान वैभव के अक्षत से अक्षय पद पाऊंगा।
भवसमुद्र तिरचिदानन्द चिन्मय की ज्योति जलाऊंगा॥वृष॥
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरातेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

आत्मज्ञान वैभव के पुष्पों से मैं काम नशाऊंगा।
शीलोदधि पा चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जगाऊंगा॥वृष॥
ॐ ह्री श्री वृषभादि वीरांतेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

आत्मज्ञान वैभव के चरु ले क्षुधा व्याधि हर पाऊंगा।
पूर्ण तृप्ति पा चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जगाऊंगा॥वृष॥
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरांतेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

आत्मज्ञान वैभव दीपक से भेद ज्ञान प्रगटाऊंगा।
मोह तिमिर हर चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जगाऊंगा॥वृष॥
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरांतेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

आत्मज्ञान वैभव की जिन में शुचिमय धूप चढ़ाऊंगा।
अष्ट कर्म हर चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जगाऊंगा॥वृष॥
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरांतेभ्यो अष्ट कर्म विनाशनाय धूपं नि.।

आत्मज्ञान वैभव के फल से शुद्ध मोक्ष फल पाऊंगा।
राग द्वेष हर चिदानन्द चिन्मय की ज्योति जगाऊंगा॥वृष॥
ॐ ह्री श्री वृषभादि वीरांतेभ्यो मोक्ष प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

आत्म ज्ञान वैभव का निर्मल अर्घ अपूर्व बनाऊंगा।
पा अनर्घ पद चिदानन्द. चिन्मय की ज्योति जगाऊंगा॥वृष॥
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरांतेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

स्वानुभूति पूर्वक सम्यक्दर्शन ही महा मोक्ष का द्वार। .
अथक परिश्रम करके श्रमण सदा होते भव सागर पार॥

जयमाला

भव्य दिगम्बर जिन प्रतिमा नासाग्र दृष्टि निज ध्यानमयी।
जिन दर्शन पूजन अघ नाशक भव भव में कल्याणमयी॥१॥
वृषभदेव के चरण पखारू मिथ्या तिमिर विनाश करू।
अजितनाथ पद बन्दन करके पच पाप मल नाश करू॥२॥
सम्भवजिन का दर्शन करके सम्यक्दर्शन प्राप्त करूं।
अभिनन्दन प्रभु पद अर्चन कर सम्यक्ज्ञान प्रकाश करूं॥३॥
सुमतिनाथ का सुमिरण करके सम्यक्चारित हृदय धरू।
श्री पद्मप्रभु का पूजन कर रत्नत्रय का वरण करू॥४॥
श्री सुपार्श्व की स्तुति करके मोह ममत्व अभाव करूं।
चन्दाप्रभु के चरण चित्त धर चार कषाय अभाव करू॥५॥
पुष्पदन्त के पद कमलो में बारम्बार प्रणाम करूं।
शीतल जिनका सुयशगान कर शाश्वत शीतल धाम वरू॥६॥
प्रभु श्रेयासनाथ को बन्दू श्रेयस पद की प्राप्ति करू।
वासुपूज्य के चरण पूज कर मै अनादि की भ्राति हरुं॥७॥
विमल जिनेश मोक्ष पद दाता पंच महाव्रत ग्रहण करु।
श्री अनन्तप्रभु के पद बन्दू पर परणति का हरण करु॥८॥
धर्मनाथ पद मस्तक धर कर निज स्वरूप का ध्यान करू।
शातिनाथ की शात मूर्ति लख परमशात रस पान करूं॥९॥
कुथुनाथ को नमस्कार कर शुद्ध स्वरूप प्रकाश करूं।
अरहनाथ प्रभु सर्वदोष हर अष्टकर्म अरि नाश करूं॥१०॥
मल्लिनाथ की महिमा गाऊं मोह मल्ल को चूर करूं।
मुनिसुव्रत को नित प्रति ध्याऊं दोष अठारह दूर करूं॥११॥
नमि जिनेश को नमन करूं मैं निज परिणति में रमण करूं।
नेमिनाथ का नित्य ध्यान धर भाव शुभा-शुभ शमन करू॥१२॥

विषय कषायों की खलनामें जैसे लगता है यह मन।
उसी भांति निज शुद्ध आत्मा में ही रह मेरे चेतन॥

पार्श्वनाथ प्रभु के चरणाम्बुज दर्शन कर भव भार हरूं।
महावीर के पथ पर चलकर मैं भवसागर पार करू॥१३॥
चौबीसों तीर्थंकर प्रभु का भाव सहित गुणगान करू।
तुम समान निज पद पाने को शुद्धातम का ध्यान करू॥१४॥

ॐ ह्री श्री वृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री चौबीस जिनेश के चरम कमल उर धार।
मन, वच, तन, जो पूजते वे होते भव पार।१५।

इत्याशीर्वाद

जाप्यपमत्र—ॐ ह्री श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्करेभ्यो नमः।

※※※

श्री ऋषभदेव पूजन

जय आदिनाथ जिनेन्द्र जय जय प्रथम जिन तीर्थंकरम्।
जय नाभि सुत मरुदेवी नन्दन ऋषभ प्रभु जगदीश्वरम्॥
जय जयति त्रिभुवन तिलक चूणामणि वृषभ विश्वेश्वरम्।
देवाधि देव जिनेश जय जय महाप्रभु परमेश्वरम्॥

ॐ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर सवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

समकित जल दो प्रभु आदि निर्मल भाव धरू।
दुख जन्म-मरण मिट जाये जल से धार करू।
जय ऋषभदेव जिनराज शिव सुख के दाता।
तुम सम हो जाता है स्वय को जो ध्याता॥

ॐ ह्री श्री ऋषभदेव जिनेन्द्रायजन्मजरामृत्यु विनाशनाय जल नि.।

सहज सिद्ध सुख पाना है तो सिद्धों का लघु नंदन बन।
एक समय मे मिट जाएगा यह अनादि चहुँ गति क्रन्दन॥

समकित चदन दो नाथ भव संताप हरूं।
चरणो मे मलय सुगन्ध है प्रभु भेंट करूं॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्री श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय ससारताप विनाशनाय चन्दनं नि.।

समकित तन्दुल की चाह मन में मोद भरे।
अक्षत मे पूजू देव अक्षयपद पद सवरे॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्री श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षत नि.।

समकित के पुष्प सुरभ्य दे दो हे स्वामी।
यह काम भाव मिट जाय हे अन्तर्यामी॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्री श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्प नि.।

समकित चरु करो प्रदान मेरी भूख मिटे।
भव भव की तृष्णा ज्वाल उर से दूर हटे॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्री श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्य नि.।

समकित दीपक की ज्योति मिथ्यातम भागे।
देखूं निज सहज स्वरूप निज परिणति जागे॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

समकित की धूप अनूप कर्म विनाश करे।
निज ध्यान अग्नि के बीच आठों कर्म जरे॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्री श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अष्टकर्म विध्वसनाय धूपं नि.।

समकित फल मोक्ष महान पाऊं आदि प्रभो।
हो जाऊं सिद्ध समान सुखमय ऋषभ विभो॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फल नि.।

वसु द्रव्य अर्घ जिनदेव चरणो में अर्पित।
पाऊं अनर्घ पद नाथ अविकल सुख गर्भित॥जय ऋषभ.॥
ॐ ह्री श्री ऋषभदेव जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आत्म भावना अगर नहीं है तो विभाव की काली रात।
शुद्ध भावना बिना न मिलता किसी जीव को मुक्ति प्रभात॥

श्री पंचकल्याणक

शुभ अषाढ़ कृष्ण द्वितीया को मरुदेवी उर में आये।
देवों ने छह मास पूर्व से रत्न अयोध्या बरसाये॥
कर्म भूमि के प्रथम जिनेश्वर तज सरवार्थसिद्ध आये।
जय जय ऋषभनाथ तीर्थंकर तीन लोक ने सुख पाये॥

ॐ ह्रीं श्री अषाणकृष्ण द्वितीया दिनेगर्भमङ्गल प्राप्तये ऋषभदेवाय अर्घ्यं।

चैत्र कृष्ण नवमी को राजा नाभिराय गृह जन्म लिया।
इन्द्रादिक न गिरि सुमेरु पर क्षीरोदधि अभिषेक किया॥
नरक त्रिर्यंच सभी जीवों ने सुख अन्तर्मुहुर्त पाया।
जय जय ऋषभनाथ तीर्थंकर जग में पूर्ण हर्ष छाया॥

ॐ ह्रीं श्री चैत्रकृष्णनवमीदिने जन्ममङ्गलप्राप्तये ऋषभदेवायअर्घ्यं नि.।

चैत्र कृष्ण नवमी को ही वैराग्य भाव उर छाया था।
लौकान्तिक सुर इन्द्रादिक ने तप कल्याण मनाया था॥
पंच महाव्रत धारण करके पंच मुष्टि कच लोच किया।
जय प्रभु ऋषभदेव तीर्थंकर तुमने मुनि पद धार लिया॥

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रकृष्णनवमीदिने तपमङ्गलप्राप्तये ऋषभदेवाय अर्घ्यं नि.

एकादशी कृष्ण फागुन को कर्म घातिया नष्ट हुए।
केवल ज्ञान प्राप्त कर स्वामी वीतराग उत्कृष्ट हुए॥
दर्शन, ज्ञान, अनन्तवीर्य, सुख पूर्ण चतुष्टय को पाया।
जय प्रभु ऋषभदेव जगती ने समवशरण लख सुख पाया॥

ॐ ह्रीं श्रीफागुनवदी एकादशदिनेज्ञानमङ्गलप्राप्तये ऋषभदेवाय अर्घ्यं.

माघ वदी की चतुर्दशी को गिरि कैलाश हुआ पावन।
आठों कर्म विनाशे पाया परम सिद्ध पद मन भावन॥
मोक्ष लक्ष्मी पाई गिरि कैलाश शिखर, निर्वाण हुआ।
जय जय ऋषभदेव तीर्थंकर भव्य मोक्ष कल्याण हुआ॥

ॐ. ह्रीं श्री माघवदी चतुर्दश्याम्मोक्षमङ्गलप्राप्तये ऋषभदेव अर्घ्यं नि.।

तीन काल तीनो लोकों में मुक्ति मार्ग है केवल एक।
शुद्ध आत्मा का चिंतन ही परभावों से है व्यतिरेक॥

जयमाला

जम्बूदीप सु भरतक्षेत्र में नगर अयोध्यापुरी विशाल।
नाभिराय चौदहवे कुलकर के सुत मरुदेवी के लाल.।1।
सोलह स्वप्न हुए माता को पन्द्रह मास रत्न बरसे।
तुम आये सर्वार्थसिद्धि से माता उर मंगल सरसे ।2।
मति श्रुत अवधिज्ञान के धारी जन्मे हुए जन्म कल्याण।
इन्द्रसुरो ने हर्षित हो पाण्डुक शिला किया अभिषेक महान ।3।
राज्य अवस्था में तुमने जन जन के कष्ट मिटाये थे ।
असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प, विद्याषट्कर्मसिखाये ।4।
एक दिवस जब नृत्यलीन सुरि नीलांजना विलीन हुई।
है पर्याय अनित्य आयु उसकी पल भर में क्षीण हुई ।5।
तुमने वस्तु स्वरूप विचारा जागा उर वैराग्य अपार।
कर चितवन भावना द्वादश त्यागा राज्य और परिवार ।6।
लौकान्तिक देवो ने आकर किया आपका जय जयकार।
आश्रय हेय जानकर तुमने लिया हृदय मे संवर धार ।7।
वन सिद्धार्थ गए वट तरू नीचे वस्त्रों को त्याग दिया।
ॐ नमःद्धिभ्यः कहकर मौन हुए तप ग्रहण किया ।8।
स्वय बुद्ध बन कर्मभूमि मे प्रथम सुजिन दीक्षाधारी।
ज्ञान मनःपर्यय पाया धरपंच महाव्रत सुखकारी ।9।
धन्य हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस ने दान दिया।
एक वर्ष पश्चात इक्षुरस से तुमने पारणा किया ।10।
एक सहस्त्र वर्ष तप कर प्रभु ध्यान में हो तल्लीन।
पाप पुण्य आश्रव विनाश कर हुए आत्मरस में लवलीन॥
चार घातिया कर्म विनाशे पाया अनुपम केवल ज्ञान।
दिव्य ध्वनि के द्वारा तुमने किया सकलजग का कल्याण॥
चौरासी गणधर थे प्रभु के पहले वृषभसेन गणधर।
मुख्य आर्यिका श्री ब्राह्मी श्रोता मुख्य भरत नृपवर॥

पुद्गल का कर्त्ता पुद्गल है चेतन का कर्त्ता चेतन।
अकर्तृत्व की शक्ति अनूठी हरती कर्मों के बंधन॥

भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड में नाथ आपका हुआ विहार।
धर्मचक्र का हुआ प्रवर्तन सुखी हुआ सारा ससार ॥
अष्टापद कैलाश धन्य हो गया तुम्हारा कर गुणगान।
बने अयोगी कर्म अघातिया नाश किये पाया निर्वाण॥
आज तुम्हारे दर्शन करके मेरे मन आनन्द हुआ।
जीवन सफल हुआ हे स्वामी नष्ट पाप दुख द्वन्द हुआ॥
यही प्रार्थना करता हूँ प्रभु उर में ज्ञान प्रकाश भरो।
चारों गतियों के भव संकट का, हे जिनवर नाश करो॥
तुम सम पद पा जाऊँ मैं भी यह भावना भाता हूँ।
इसीलिए यह पूर्ण अर्घ चरणों में नाथ चढ़ाता हूँ॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेव जिनेंद्राय महाअर्घ्य नि. स्वाहा।
वृषभ चिन्ह शोभित चरण ऋषभदेव उर धार।
मन वच तन जो पूजते वे होते भव पार॥

• इत्याशीर्वादः •

जाप्यमंत्र -ॐ ह्रीं श्री ऋणभदेव जिनेन्द्राय नमः

***

भजन

१

जगत है दो दिन का सपना।
धन, वैभव परिवार देह सब कोई नहीं अपना॥
बिना ज्ञान जप तप संयम व्रत क्या तप में तपना।
अपना शुद्ध स्वभाव छोड़कर क्यों पर में खपना॥
अगर मोक्ष की अभिलाषा है तो निज को जपना।
निर्मल शुद्ध स्वरूप सदा ही है शाश्वत अपना॥

पर्यायें प्रति समय बदलतीं द्रव्य शाश्वत रहता है।
क्यो पर्यायों में मोहित हो भव भावों में बहता है॥

२

गुण गाऊँ माँ जिनवाणी के।
उपदेश सुनू श्रुत ज्ञानी के॥
अतर मन को उज्ज्वल करके।
बाह्यान्तर उर निर्मल करके,
फिर चलूँ मार्ग निज ध्यानी के॥गुण॥
जागेगा स्वपर भेद पावन
समकित होगा उर मनभावन
जयगीत सुनू कल्याणी के॥गुण॥

३

सजन होली खेलन अइयो जी।
मूल भूल की सगरी धूराबेगि उड़ैयो जी॥
भेद ज्ञान पिचकारी भर भर खूब चलइयोजी।
जप तप व्रत सयम की रोरी संगमे लइयो जी॥

४

ज्ञान के उपवन मे झूलो।
पुण्योदय मे अरे बावरो पल भर मत फूलो॥
करोधर्म का ही आराधन,
ज्ञान भाव का लेकर साधन,
भाव भासना करके अब तो निज आतम छूलो॥ज्ञान॥
निज पर मे एकत्व त्याग दो,
पुण्य पाप के भाव त्याग दो,
शुद्ध भाव का अवलबन ले राग द्वेष भूलो॥ज्ञान॥

५

हमारी औषधि समकित जल।
यह भव रोग मिटावन हारी अनुपम सहज सरल॥
भव अनत घर घर दुख पायो पी पी मोह गरल।

भाव भरण प्रति समय हो रहयो बनो दीन निर्बल॥
एक बेर भी जो पीलेवे हो जावे उज्ज्वल।
परम शुद्ध ज्ञायक स्वभाव से पावे रूप विमल॥
निज अनुभव रस पान करे नितनिजानद निर्मल।
सकल ज्ञेय ज्ञाता बन जावे अजर अमर अविकल॥

६

चेतन अजर अमर अविनाशी।
अमल अखंड अमूर्तिक अनुपम अविकल सुखराशी॥
सर्वश्रेष्ठ मंगल सर्वोदय आत्मतीर्थवासी।
ज्ञानसिंधु चैतन्य पुंज सुखसागर भवनाशी॥
वीतराग विज्ञान ज्ञानमय निज पद अभिलाषी।
त्रिभुवन तिलक विश्व चूडामणि निज गुण पर काशी॥

७

आज तो अनुभव रस बरसे।
अनुभव सुख सागर की बूंदें पी जियरा हरषे॥
तीन लोक की सगरी संपति धूरा सम दरसे।
शुद्धातम की प्रीत अनोखी नस नस में सरसे॥
निज घर को निजवैभव पायो निकस्योपरघरसे।
परपरिणति कुलटा अब भागी निज परिणति दरसे॥
रूपगंध रस स्पर्श शब्द बिन यह निज स्पर्शे।
परम मोक्ष संपदा हेतु लौ लागी निज घर से॥

८

निजआतम सिंगार सबेरे।
समकित मुकुट ज्ञान को कुन्डल कंगन चारित केरे॥
संयमतिलक हार सामायिक फिर निज रूप निहेरे।
निज दर्पण में निज को देखे पर की ओर न हेरे॥
निज को दर्शन निज को पूजन निज को जाप जपेरे।
निज चिन्तन निज मनन मिटावत जनम जनमफेरे॥

निश्चय है सामान्य द्रव्य अरु है पर्याय भेद व्यवहार।
द्रव्याश्रित ही शिव सुखदाता पर्यायाश्रित है संसार॥

९

बदरा घिर घिर आएरी।
मिथ्यात् की तपन बुझी नहीं अतिदुखपाएरी।
नरनारक सुर पशु पर्यय में काल बिताएरी॥
पुण्य सँजोग मिली जिन ध्वनि अमृत बरसाएरी॥
भ्रम की ज्वाला पलक झपकते ही बुझ जाएरी।
स्वपर भेदविज्ञान हृदय में अलख जगाएरी।
समकित की बौछार पड़त ही मन हर्षाएरी॥
सम्यक्ज्ञान नीर की वर्षा उर को भाएरी।
तप संयम चारित्र घाट पा जिय हुलसाएरी॥
रत्नत्रय की तरणी भव से पार लगाएरी।
सिद्ध शिला पर मुक्ति वधू वरमाल पिन्हाएरी॥
निज पुरुषारथ से भव संकट सब टल जाएरी।
सदि अनंत काल लौं चेतन शिवसुख पाएरी॥

१०

कब चेतन के दरसनपाएँ। पत्थर के देवता सुहाए॥
जड़ पुद्गल को अपनामाना, अपना आत्मस्वरूप न जाना,
चारों गतियों में दुख पाएँ। कब चेतन के दरस न पाए॥
अपना आत्म स्वरूप पिछानो, निज को निज पर को पर जानो,
यही मार्ग शिवपुरतक जाए। कब चेतन के दरसन पाए॥
ज्ञानामृत पीलो मन माना, शुद्ध स्वभाव भाव ही पाना,
मुक्तिपुरी में आनंद पाए। कब चेतन के दर्शन पाए॥

❋ ❋ ❋